DAMAGE BOOK

बटोही

[खलील जिब्रान के The wanderer का अनुवाद]

अनुवादक--

किशोरी रमण टण्डन

नवयुग - साहित्य सदन

इन्दौर

सर्वोदय साहित्य मन्दिर

हुसेनीअलम रोड़, हैदराबाद (दक्षिण).

प्रकाशक—
गोकुलदास धूत
नवयुग साहित्य सदन,
इन्दौर.

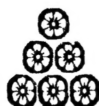
प्रथम-संस्करण
जून १९४७
मूल्य—१।=)

मुद्रक—
सी. एम. शाह,
मॉडर्न प्रिन्टरी लि०,
इन्दौर.

अनुक्रम



—: चित्र सूची: —



कवि खलील जिब्रान



[एक परिचय]

सन् १८८३ ई० में सीरिया देश के माउन्ट लेबनॉन प्रांत के एक सम्पन्न एवं प्रतिष्ठित घराने में कवि खलील जिब्रान का जन्म हुआ था। वह बारह वर्ष की अवस्था में अपने माता पिता के साथ बेल्जियम, फ्रांस और अमेरिका की सैर करने गये और दो वर्ष बाद लौट कर आए, तभी उन्हें बइरूत के अल-हिकमत मदरसे में दाखिल कराया गया जहाँ उन्होंने अरबी साहित्य का गहरा अध्ययन किया। तभी वह अरबी में कवितायें भी लिखने लगे और थोड़े ही समय में उनकी गणना अरबी के महान साहित्यकारों में होने लगी। सन् १९०३ ई० में वह पुनः अमेरिका गये जहां उन्होंने अंग्रेजी साहित्य का अध्ययन शुरू किया। पांच वर्ष बाद वह फ्रांस चले आए जहां उन्होंने चित्रकला का अभ्यास किया। सन् १९१२ ई० में वह फिर अमेरिका गये और जीवन के अन्त तक न्यूयार्क में ही रहे।

अमेरिका में रह कर करीब १९१८ ई० से उन्होंने अंग्रेजी में लिखना शुरू किया और तब से उनकी ख्याति सिर्फ अंग्रेजी भाषा भाषी जनता में ही नहीं बल्कि अनुवाद द्वारा सारे संसार में फैल गई और अब तक करीब पच्चीस भाषाओं में उनकी पुस्तकों के अनुवाद हो चुके हैं।

उनकी तमाम पुस्तकें स्वयं उनके बनाये हुए चित्रों से विभूषित हैं। उनकी चित्रकला उनकी अपनी चीज है जो गूढ़ होते हुए भी सजीव एवं एक रूप है। इन चित्रों का प्रदर्शन पश्चिमी जगत के सारे देशों की राजधानियों में हो चुका है, जिनकी तुलना यूरोप के महान चित्रकार रोडिन और विलियम ब्लेक से की जाती है।

उनकी अंग्रेजी पुस्तकों का नाम और प्रकाशन का वर्ष इस प्रकार है :--

दि मैडमैन	......	१९१८
बीस चित्र	......	१९१९
दि फोर रनर	....	१९२०
दि प्राफेट	....	१९२३
सैन्ड एण्ड फोम	....	१९२६
जीसस, दि सन आव मैन	......	१९२८
दि अर्थ गाड्स	......	१९३१
दि वान्डरर	......	१९३२
दि गार्डन आव दि प्राफेट	......	१९३३

वैसे तो उपरोक्त सभी पुस्तकों का पूर्व एवं पश्चिम की कितनी ही भाषाओं में अनुवाद हो चुका है लेकिन वास्तव में दि प्राफेट +[The prophet) तो कवि की सर्वोत्कृष्ट (मास्टर पीस) रचना गिनी जाती है और जिसका संसार की पच्चीस से भी अधिक भाषाओं में अनुवाद हो चुका है।

इस महान् कवि दार्शनिक एवं चित्रकार का देहान्त ४८ वर्ष की अवस्था में अप्रेल १०, १९३१ ई० को हो गया। यदि वह कुछ दिन और जीवित रहता तो उसकी और भी कितनी महान रचनाओं से संसार लाभान्वित होता।

+ The prophet का हिन्दी अनुवाद 'जीवन सन्देश' के नाम से श्री किशोरीरमण टण्डन द्वारा किया जा चुका है जो सन् १९४० ई० में सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली से प्रकाशित हो चुका है।

—प्रकाशक

आग्रह

....

.....?

तुमने मेरे हाथों में खलील जिब्रानकी The Wanderer देते हुए उसका अनुवाद कर डालने का आग्रह किया था और मैं अपनी उस समय की असमर्थताओं के कारण इसके लिये सहज ही में 'हाँ' न कर सका।

तभी, तुम्हारी आँखों से आँसू की दो या न जाने कितनी गरम गरम बूंदें मेरी उँगलियों को स्पर्श करती हुई पृथ्वी में समा गईं।

तब से मेरी ये उँगलियाँ निरन्तर जल रही हैं और मैं यह अनुवाद सम्भवतया इस जलन को शान्त कर पा सकने के लिए ही प्रस्तुत कर सका हूँ।

काश! मेरी असमर्थताओं पर विजय पा लेने वाले अपने आग्रह की सफलता पर तुम्हारी आँखें दो बूंद प्रसन्नता के आँसू गिरा कर इन उंगलियों की जलन शांत कर पातीं।

सरदार पुरा,
जोधपुर,

किशोरी रमण टण्डन.



आभार प्रदर्शन



१—उसके प्रति : जिसने मुझे प्रस्तुत अनुवाद कर डालने के लिए प्रेरित किया।

२—श्री मशरूवाला : जिनकी 'विदाय वेलाय' से मूल लेखक—कवि खलील जिब्रान का परिचय प्राप्त हो सका।

३—श्री हरिकृष्ण 'प्रेमी' : जिनकी सहायता और परामर्श से यह कार्य पूरा हो सका।

४—अपने सभी मित्र : जिन्होंने मुझे प्रोत्साहित किया और जिन्होंने निरुत्साहित।

—कि० र० टण्डन



बटोही

१

बटोही

वह मुझे चौराहे पर मिला। उसके तन पर केवल एक अँगरखा था और हाथ में छड़ी। उसके चेहरे पर विषाद की छाया थी।

हमने परस्पर अभिवादन किया। तब मैंने कहा, "मेरे घर चल कर मेरा आतिथ्य स्वीकार करो।"

और वह मेरे साथ हो लिया।

मेरी घरवाली और बच्चे घर की दहलीज पर ही मौजूद थे। जिन्हें देखकर वह मुसकरा उठा। उसका आना घर के सभी लोगों को अच्छा लगा।

तब हम सब एक साथ भोजन करने बैठे। सभी उसकी उपस्थिति से प्रफुल्लित थे—क्योंकि उसके व्यक्तित्व में गाम्भीर्य और रहस्य के दर्शन हो रहे थे।

भोजन के पश्चात् हम लोग अंगीठी के पास आ बैठे और तभी मैंने उसकी यात्रा के सम्बन्ध में कुछ प्रश्न पूछे।



उस रात को और अगले दिन भी वह अपनी यात्रा के बहुत से वृत्तान्त सुनाता रहा। वैसे तो स्वभाव से वह बड़ा ही उदार था परन्तु उसे जीवन के मार्ग में बड़ी ही परेशानी उठानी पड़ी थी और कितने ही कटु अनुभव हुए थे। अतएव उसकी ये कहानियां उसके जीवन के आंधी-तूफान हैं।

तीन दिन बाद वह हमसे विदा हुआ, तब हमें ऐसा अनुभव हुआ मानों हमारे अपनों में से ही कोई बाहर उद्यान में टहलने गया है और अभी तक लौटा नहीं है।





२

वस्त्र

एक दिन सुन्दरता और कुरूपता की समुद्र के किनारे भेंट हुई। दोनों ने परस्पर कहा—"आओ, समुद्र में स्नान करें।"

तब दोनों ने अपने कपड़े उतार दिए और समुद्र में तैरने लगीं।

थोड़ी देर में कुरूपता किनारे पर आई और सुन्दरता के वस्त्र अपने शरीर पर सजाकर चलती बनी।

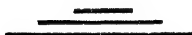
जब सुन्दरता समुद्र के बाहर आई तो उसने देखा कि उसके कपड़े गायब थे। नंगे रहने में वह लज्जा का अनुभव कर रही थी। हारकर उसने कुरूपता के ही कपड़े पहन लिए और अपनी राह ली।

आज तक संसार के लोग कुरूपता को सुन्दरता और सुन्दरता को कुरूपता समझने की भूल कर रहे हैं।



फिर भी कुछ लोग ऐसे भी हैं जो सुन्दरता के चेहरे से परिचित हैं और उसके बदले हुए वस्त्रों में भी उसे पहचान लेते हैं।

और कुछ ऐसे भी हैं जो कुरूपता को पहचानते हैं और जिनकी आंखों के आगे उसका सच्चा रूप अवगुण्ठन में छिपा नहीं रह सकता।





२

गरुड़ और चकवा

एक ऊँचे पर्वत की चट्टान पर एक चकवा और गरुड़ की भेंट हुई। चकवा ने कहा, "नमस्कार श्रीमान्।"

गरुड़ ने उसकी तरफ घृणा से देखा और आहिस्ते से कहा, "नमस्कार।"

तब चकवा ने कहा, "आशा है आप सानन्द होंगे।"

गरुड़ ने कहा, "हाँ–आँ–हम आनन्द में हैं–लेकिन तुम्हें मालूम होना चाहिए कि हम पक्षियों के सम्राट् हैं–और जब तक हम स्वयं ही बात शुरू न करें तब तक किसी पक्षी को हमसे बात करने की धृष्टता नहीं करनी चाहिए।"

चकवा ने कहा, "मेरे ख़याल में तो हम दोनों एक ही कुटुम्ब के प्राणी हैं।"

गरुड़ ने आँखें तरेर कर घृणापूर्वक उसकी ओर देखा और कहा, "तुमसे किस मूर्ख ने कहा है कि तुम और हम एक ही परिवार के हैं।"

तब चकवा बोला, "जनाब, आपको मालूम होना चाहिए कि मैं आपके समान ही ऊँचा उड़ सकता हूँ, और इसके अतिरिक्त मैं



अपने मधुर गीत से संसार के अन्य प्राणियों को आनन्द देने की क्षमता भी रखता हूँ। आप न किसी का मनोरंजन ही कर सकते हैं और न आनन्द दे सकते है।"

गरुड़ ने क्रोध में भरकर कहा,—"मनोरंजन और आनन्द! ओ धूर्त प्राणी! मैं चोच की एक चोट से तेरा काम तमाम कर सकता हू। तू है ही क्या—मेरे पंजे के बराबर भी नहीं।"

चकवा उड़कर गरुड़ की पीठ पर जा बैठा और लगा उसके पंख नोचने। गरुड़ को भी क्रोध आगया और उस छोटे से पक्षी से अपना पिण्ड छुड़ाने के लिए वह बड़ी तेजी से खूब ऊँचा उड़ता गया—फिर भी उसका कुछ बस न चला। हारकर फिर उसी चट्टान पर उतर आया। बुरी तरह खीजा हुआ। वह तुच्छ प्राणी अब भी उसकी पीठ पर सवार था और गरुड़ अपने दुर्भाग्य को कोस रहा था।

उसी क्षण एक कछुवी उधर से आ निकली। यह हाल देख कर उसे हँसी आ गई और हंसते हँसते वह लोट-पोट हो गई।

गरुड़ ने घृणा से कछुवी की ओर देखकर कहा,—"ओ! पृथ्वी पर धीरे धीरे रेंगने वाली अकिन्चन प्राणी! तू भला क्या देख कर हँस रही है?"

कछुवी ने कहा,—"हः हः, यह हँसने की बात तो है ही कि आपको घोड़ा बनाकर एक छोटा सा पक्षी आपकी पीठ पर सवारी गाँठे हुआ है।"

गरुड़ ने उससे कहा, —"जा—जा, अपना काम कर—यह तो मेरे भाई चकवा और मेरे बीच पारिवारिक मामला है। तुझे इससे मतलब।"



४

प्रणय-गीत

एक बार एक कवि ने एक प्रणय-गीत लिखा। गीत बना भी सुन्दर, उसने उसकी अनेक प्रतियाँ तैयार कीं और अपने मित्रों परिचितों—स्त्रियों और पुरुषों दोनों—के पास भेजीं। उनमें एक नवयुवती भी थी जिससे वह जीवन में केवल एक बार ही मिला था और जो पर्वतों के पार रहती थी।

दो एक दिन के बाद उस नवयुवती की ओर से एक सन्देश-वाहक पत्र लेकर आ पहुँचा। पत्र में उसने लिखा था, "मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ कि इस प्रणय-गीत में—जो तुमने मेरे लिए लिखा है—मेरे हृदय को छू लिया है। तुम शीघ्र आकर मेरे माता-पिता से मिलो—ताकि हम अपनी सगाई का निश्चय कर सकें।

इस पर कवि ने पत्र के उत्तर में लिखा, "यह तो कवि के हृदय से प्रस्फुटित एक नैसर्गिक प्रणय-गीत था—संसार के प्रत्येक पुरुष का प्रत्येक स्त्री के लिए।"

उस नवयुवती ने कवि को प्रत्युत्तर में लिखा, "ओ! शब्द जाल बिछाने वाले पाखंडी! जाओ, आज से मृत्युपर्यन्त मेरे हृदय में सभी कवियों के प्रति घृणा के भाव बने रहेंगे—केवल तुम्हारे कारण।"



५

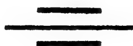
रुदन और हास्य

नील नदी के किनारे; संध्या समय एक बिज्जू और एक मगर की भेंट हुई। उन्होंने रुक कर एक दूसरे का अभिवादन किया।

बिज्जू ने पूछा—" कहो, कैसे हाल चाल हैं ?"

मगर ने उत्तर दिया–"मेरा तो बुरा हाल है। जब कभी मैं वेदना और शोक से आकुल होकर रो पड़ता हूँ तो सारे जीव-जन्तु कह उठते हैं, 'उँह, ये तो मगर के आँसू हैं,' उनके ये शब्द मेरे हृदय को कितनी पीड़ा पहुँचाते हैं यह मैं कैसे बताऊँ ?"

तब बिज्जू बोला, " तुम तो अपना रोना ले बैठे—लेकिन जरा मेरी बात पर भी गौर करो। जब मैं सृष्टि के सौन्दर्य, रहस्य और विचित्रता को देखकर आनन्दातिरेक में अट्टहास कर उठता हूँ जैसे दिवस हँसता है--तो लोग कहते हैं--उँह, यह तो बिज्जू का अट्टहास है।"





६

मेले में

किसी मेले में किसी देहात से एक लड़की आई–अत्यन्त सुन्दर गुलाब और कुमुद सा मुखड़ा, बालों पर सूर्यास्त की छटा और ओठों पर ऊषा की मुसकान।

मनचले युवकों ने जैसे ही उसे देखा कि उसके चारों ओर मँड़राने लगे। कोई उसके साथ नाचने के लिये उत्सुक था तो कोई उसके सम्मान में भोज देने को प्रस्तुत। वे सभी लालायित थे उसके अरुण कपोलों को चूम लेने के लिये। आखिर वह मेला ही तो था।

लेकिन बेचारी लड़की एकदम भौंचक्की होगई–सकपका गई। उसे उन नवयुवकों का यह व्यवहार बहुत बुरा लगा। कितनों को उसने बुरा भला भी कहा और दो-एक के तो उसे थप्पड़ भी लगाने पड़े। अन्त में वह उनसे पीछा छुड़ा कर भागी।

घर जाते हुए वह रास्ते भर अपने मन में सोचती रही–"मैं तो तंग आगई! कितने असभ्य और जंगली हैं ये लोग। एकदम असह्य है इनका व्यवहार।"

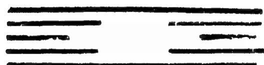
उस मेले और उन नवयुवकों पर निरंतर विचार करते हुए उस



सुन्दर सुकुमारी ने एक वर्ष बिता दिया। वह फिर मेले में आई–उसी तरह गालों में गुलाब और कुमुद, बालों में सूर्यास्त का सुनहलापन और ओठों पर सूर्योदय की मुसकान लिये हुए।

लेकिन उन्हीं नवयुवकों ने उसे देखते ही आंखें फेरलीं। उसे सारे दिन बिलकुल अकेले रहना पड़ा, किसी ने उसे पूछा तक नहीं।

संध्या के समय वह घर की ओर जाते हुए मन ही मन बड़-बड़ाती गई —"मैं तो तंग आगई-कितने असभ्य और जंगली हैं ये लोग-एक दम असह्य है इनका व्यवहार।"



७

दो रानियाँ

शावाकीज नगर में एक राजा रहता था। उसे सभी प्यार करते थे—स्त्री और पुरुष, बूढ़े और बच्चे, यहां तक कि वन्य-पशु भी उसके प्रति सम्मान प्रदर्शित करने आते थे।

लेकिन सभी लोग यही कहते थे कि उसकी पत्नी—राजरानी उसे प्यार नहीं करती—उल्टे उससे घृणा करती है।

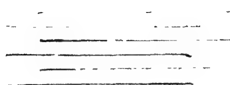
एक दिन पास के एक नगर की राजरानी शावाकीज की राजरानी से मिलने आई। वे पास बैठकर बातें करने लगी और बातों ही बातों में दोनों के पतियों की चर्चा छिड़ गई।

शावाकीज की रानी ने आवेश के साथ कहा—"तुम्हारे विवाह को हुए इतने वर्ष हो गए—फिर भी तुम्हारा दाम्पत्य-जीवन कितना सुखमय है—मुझे तो तुम से ईर्ष्या होती है। मैं तो अपने पति से घृणा करती हूं—केवल मुझे ही उनसे स्नेह नहीं है। वास्तव में मैं अत्यन्त दुखिया हूँ।"

तब नवागता रानी ने उसकी आँखों में झाँका और कहा—"मेरी सखी सच बात यह है कि तुम वास्तव में अपने पति को प्यार करती हो



क्योंकि अपने प्रियतम के लिए तुम्हारी लालसायें अब भी सुरक्षित हैं-यही तो नारी-जीवन के लिए देन है-जैसे उपवन के लिए वसंत। तुम्हें तो मुझ पर और मेरे पति पर तरस खाना चाहिए। क्योंकि हम एक दूसरे को जैसे-तैसे चुपचाप निबाहे जा रहे हैं। आश्चर्य है कि तुम और तुम्हारी तरह दूसरे लोग इसे ही सुख समझते हैं।"





८

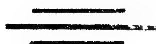
वज्रपात

आंधी-पानी का दिन था। एक ईसाई पादरी गिरजाघर में बैठा था, इतने मे एक स्त्री आई जो ईसाई न थी। स्त्री ने पादरी के सामने खड़े होकर कहा-"मैं ईसाई नहीं हूँ, क्या मेरे लिये भी नरक ज्वाला से बचने की कोई व्यवस्था है!"

पादरी स्त्री की ओर देख कर बोला-"नहीं, मुक्ति केवल उनके लिए है जिन्होंने विधिवत् ईसाई-धर्म की दीक्षा ली है!"

पादरी के मुँह से ज्योंही ये शब्द निकले-त्योंही अचानक एक भयानक गर्जन के साथ आकाश से गिरजाघर पर वज्र गिरा और वहां आग का साम्राज्य हो गया।

नगरवासी दौड़ दौड़ आए और उस स्त्री को तो वे लोग बचा सके-लेकिन वे पादरी महाशय कभी के अग्नि देवता का आहार बन चुके थे।





९

वैरागी और बन के पशु

एक हरी-भरी पहाड़ी पर एक वैरागी रहा करता था। उसकी आत्मा शुद्ध और हृदय निर्मल था। वन के पशु और आकाश के पक्षी सभी जोड़े जोड़े उसके पास आते और वह उन्हें उपदेश दिया करता। वे उसकी बातों में खूब रस लेते, उसे घेर कर बैठ जाते और बड़ी रात तक हिलने का नाम भी नहीं लेते, तब वह स्वयं ही जाने की आज्ञा देकर उन्हें अपने आशीर्वाद के साथ वायु और जंगल के भरोसे सौंप देता।

एक दिन संध्या के समय, जब वह प्रेम के सम्बन्ध में उपदेश कर रहा था, एक तेंदुए ने सर उठा कर वैरागी से पूछा, "जी, आप हम से प्रेम की चर्चा तो कर रहे हैं—लेकिन यह तो बताइए, आप की प्रेयसी कहां है !"

तब वैरागी ने उत्तर दिया, "मेरी कोई प्रेयसी नहीं है।"

इस पर पशु-पक्षियों के झुण्ड में आश्चर्य का कोलाहल गूँज उठा। वे आपस में कहने लगे, "भला, वह हमें प्रेम और दाम्पत्य-जीवन के सम्बन्ध में क्या उपदेश कर सकता है, जब वह स्वयं इस



विषय में कोरा है।" वे चुपचाप अवज्ञा-भरे भाव से उठ कर उसे अकेला छोड़ कर चल दिये।

वह वैरागी सारी रात अपने बिस्तरे पर औंधे मुँह पड़ा बुरी तरह रोता और छाती पीटता रहा।



१०

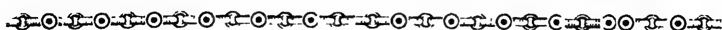
नबी और बालक

एक दिन नबी शरीह को एक उद्यान में एक बालक मिला। बालक दौड़ा दौड़ा उनके पास आया और बोला–"नमस्कार श्रीमान्" नबी ने भी कहा, "नमस्कार भाई।" और क्षणभर बाद वह फिर बोले–"हें, तुम अकेले ही कैसे आए?"

इस पर बालक हँस पड़ा और खुश होकर बोला, "अपनी परिचारिका से पीछा छुड़ाने में काफी समय लग गया और वह तो अभी तक यही समझती होगी कि उसके पास ही किसी झाड़ी के पीछे मैं छिपा बैठा हूं। लेकिन देखिये तो मैं यहां आ पहुँचा।" तब उसने नबी को फिर देखा और पूछा, "आप भी तो अकेले ही हैं, आपकी परिचारिका कहां है?"

नबी ने उत्तर दिया, "ओह, यह एक निराली बात है, सच पूछो तो मैं प्रायः उससे अलग हो ही नहीं सकता; और अभी अभी जब मैं इस उद्यान में आया तो मैंने देखा कि वह मुझे झाड़ियों के पीछे खोज रही है।"

इस पर बालक ने तालियाँ बजाते हुए किलकारी मारकर कहा, "आहा, तब तो आप भी मेरी ही तरह खो गए हैं। क्या खो



जाना आनन्द की बात नहीं है ?" तब उसने फिर पूछा—"आप का नाम क्या है ?"

नबी ने उत्तर दिया—"लोग मुझे नबी कहते हैं—लेकिन यह बताओ तुम कौन हो ?

"मैं-मैं तो केवल आत्म-स्वरूप हूँ" बालक ने कहा, "मेरी परिचारिका मुझे खोज रही है और उसे इस बात का भी पता नहीं है कि मैं हूँ कहाँ ?"

तब नबी ने आकाश की ओर देखकर कहा, "मैं भी कुछ देर के लिए अपनी परिचारिका से बिछुड़ गया हूँ—लेकिन वह मुझे ढूंढ अवश्य लेगी।"

उसी समय उस बालक का नाम लेकर एक स्त्री के पुकारने की आवाज सुनाई दी। "देखो" बालक ने कहा, "मैंने कहा था न, वह मुझे अवश्य खोज निकालेगी।"

और उसी समय दूसरी आवाज सुनाई दी, "शरीह तुम कहाँ हो ?"

तब नबी ने कहा, "देखो, मेरे बालक, उन्होंने भी मुझे पा लिया।"

और अपना मुँह ऊँचा करके शरीह ने उत्तर दिया "मैं यहाँ हूँ।"

———



११

मोती

एक सीप ने अपनी पड़ोसिन सीप से कहा, "मेरे पेट में भयंकर पीड़ा हो रही है। वहां कोई भारी-भारी गोल-गोल सी चीज जान पड़ती है जिसने मेरे प्राणों को संकट में डाल रखा है।"

तब दूसरी सीप ने दर्पपूर्ण संतोष के साथ कहा- "आकाश और समुद्र को अनेकानेक धन्यवाद कि मैं पीड़ा से मुक्त हूँ-भीतर और बाहर सब प्रकार नीरोग और चंगी हूँ।"

उसी समय एक केंकड़ा उधर से जा रहा था; उसने उन दोनों की बातें सुन लीं और नीरोग और चंगी होने की डींग भरने वाली से कहा, "हाँ-हाँ तुम नीरोग और चंगी जरूर हो-लेकिन तुम्हारी पड़ोसिन जिस पीड़ा का भार वहन कर रही है, जानती हो वह क्या है-एक असाधारण सुन्दर मोती।"



१२

शरीर और आत्मा

एक पुरुष और स्त्री झरोखे में बैठे हुए वसन्त-श्री का आनन्द ले रहे थे। वे एक दूसरे से बिल्कुल सट कर बैठे थे, वह स्त्री बोली, "मैं तुमसे प्रेम करती हूं—तुम रूपवान् हो, धनवान् हो, और सदा सुन्दर वस्त्रों से सुसज्जित रहते हो।"

और पुरुष बोला, "मैं तुम्हें प्यार करता हूं। तुम एक सुन्दर कल्पना हो—एक ऐसी सूक्ष्म वस्तु हो जो हाथ से नहीं पकड़ी जा सकती—तुम मेरे स्वप्नों में झंकृत होने वाला सुमधुर संगीत हो।"

किन्तु उस स्त्री ने खीझकर अपना मुंह फेर लिया और कहा—"रहने दीजिए जनाब! मैं कल्पना नहीं हूं—तुम्हारे स्वप्नों में आने-जाने वाली वस्तु नहीं हूं—मैं स्त्री हूं—मैं चाहती हूं कि तुम मुझे अपनी पत्नी और अपने भावी शिशु की माँ के रूप में ग्रहण करो।"

वे दोनों अलग हो गए।

पुरुष ने अपने मन में कहा, "फिर एक सपना अन्धकार बन गया।"

दूसरी ओर स्त्री ने कहा, "अच्छा हुआ, ऐसे आदमी का क्या ठिकाना! जो मुझे अन्धकार और स्वप्न बना डालना चाहता है।"



१३

सम्राट्

सादिक साम्राज्य की प्रजा ने विद्रोह के नारे लगाते हुए अपने सम्राट् का महल घेर लिया।

सम्राट् राजमहल की सीढ़ियों से नीचे उतरा। उसके एक हाथ में राजमुकुट था और दूसरे में राजदण्ड।

सम्राट् के आगमन से भीड़ में सन्नाटा छा गया। वह सबके सामने खड़े होकर बोला—"मित्रों—अब हमारे बीच राजा-प्रजा का सम्बन्ध समाप्त हो गया है। लो, यह राजमुकुट और राजदण्ड हाजिर है। अब मैं तुम्हीं लोगों में से एक बनकर रहूंगा। मैं पहले मनुष्य हूं—पीछे कुछ और। मनुष्य होने के नाते मैं भी तुम्हारे साथ मिल कर श्रम करूँगा—जिससे हम सभी का भाग्य और भी अच्छा बन सके। किसी शासक की जरूरत ही क्या है? चलो, अब हम सब मिलकर अपने खेतों और द्राक्ष-कुंजों मे अपने हाथों से काम करें। अब मुझे कृपा कर एक खेत या द्राक्ष-कुंज बता दो जहाँ मैं काम कर सकूं।"

यह सुन कर सभी चकित और स्तब्ध रह गए। जिस सम्राट् से



वे इतने असंतुष्ट थे—वही राजमुकुट और राजदंड छोड़कर उन्हीं में शामिल हो गया था।

सभी अपनी अपनी राह लगे। सम्राट् भी एक आदमी के साथ एक खेत की ओर चल दिया।

यह तो हुआ लेकिन शासक के अभाव में सादिक साम्राज्य की व्यवस्था भली प्रकार न चल सकी। असंतोष के बादल फिर मँडराने लगे। लोगों ने गली-गली पुकारना शुरू किया—"शासन के बिना काम नहीं चल सकता और उसके लिए हमें शासक चाहिए ही।"

तब बूढ़े और जवान-सभी एक स्वर से बोल उठे—",हम अपने सम्राट् को गद्दी पर फिर आसीन करेंगे।"

अब सब मिल कर सम्राट् के पास पहुंचे जो एक खेत में काम कर रहा था। लोग उसे वापिस लाए। दुबारा उसे सिंहासन पर बैठाया गया। फिर उसके शीश पर राजमुकुट पहनाया गया और उसके हाथ में राजदण्ड दिया गया। लोगों ने कहा—"क्षमता और न्याय के साथ आप हम पर शासन कीजिए।'

सम्राट ने कहा—"हाँ—मैं पूरी क्षमता से शासन करूंगा और आकाश और पृथ्वी के देवताओं से मेरी प्रार्थना है कि वे मुझे न्याय-पूर्वक शासन करने की योग्यता प्रदान करें।"

इसके बाद उसके सामने कुछ स्त्री-पुरुष एक जागीरदार के दुर्व्यवहार की शिकायत लेकर आ पहुंचे। वह उन्हे क्रीत-दास से अधिक नहीं समझता था।

सम्राट् ने तुरन्त ही उस जागीरदार को बुलवाया और उससे कहा—"परमात्मा की न्याय-तुला पर प्रत्येक मानव के जीवन का



तोल बराबर है। तुम अपने खेतों और द्राक्ष-कुंजों में काम करने वाले लोगों के जीवन का कुछ भी मोल नहीं समझते—इसीलिए तुम्हें देश-निकाले की आज्ञा दी जाती है। तुम्हें सदा के लिए इस राज्य की सीमा के बाहर जाना होगा।"

दूसरे दिन फिर कुछ लोगों की भीड़ पहाड़ी के पार रहने वाली एक रानी के अत्याचार की कहानी लेकर सम्राट् के पास पहुंची। तुरन्त ही रानी को दरबार में बुलवाया गया। उसे देश-निकाले का दण्ड देते हुए सम्राट् ने कहा—"हमारी अपेक्षा वे अधिक आदर के अधिकारी हैं जो हमारे खेत जोतते-बोते और हमारे द्राक्ष-कुंजों की सम्भाल करते हैं। सचमुच वे महान् हैं—क्योंकि हम उन्हींकी तैयार की हुई रोटियाँ खाते और उन्हींकी तैयार की हुई मदिरा पीते हैं। तुम इस तथ्य को नहीं समझतीं—इस राज्य से निकल जाओ।"

तब कुछ और भी स्त्री पुरुष आए और बोले कि पादरी ने गिर्जाघर बनवाने के लिए उन्हें पत्थर ढोने और गढ़ने के लिए मजबूर किया और मजदूरी के नामपर अँगूठा दिखा दिया—यद्यपि यह सबको विदित था कि सोने-चाँदी से उसकी तिजोरी भरी हुई थी—और उन बेचारों के भूख से पेट और पीठ एक हो रहे थे।

इस पर सम्राट् ने पादरी को भी बुला भेजा। जब वह उपस्थित हुआ तो सम्राट् ने कहा—"तुमने जिस क्रास को अपने हृदय के समीप धारण कर रखा है, वह है जीवन को जीवन देने का प्रतीक। लेकिन इसके विपरीत तुमने जीवन से जीवन का अपहरण किया और बदले में दिया कुछ भी नहीं। अतएव इस राज्य को छोड़ देना ही



तुम्हारे लिए उचित है। मेरी आज्ञा है कि फिर कभी यहां वापिस न आना।"

इस प्रकार पूर्णिमा तक प्रतिदिन स्त्री-पुरुष आ-आकर सम्राट् के सामने अपना दुखड़ा रोते रहे और एक पखवारे तक प्रतिदिन किसी न किसी अन्यायी को देश-निकाले का दण्ड दिया जाता रहा।

सादिकवासी आश्चर्यचकित हो गए और मन में बड़े ही प्रसन्न रहने लगे।

एक दिन फिर बड़े बूढ़ों और नवयुवकों ने आकर राज्य-प्रासाद को घेर लिया—और फिर सम्राट् को उपस्थित होने के लिए वाध्य किया। सम्राट् फिर एक हाथ में राजमुकुट और दूसरे हाथ में राज-दण्ड लेकर आया।

उसने उनसे पूछा—"अब तुम मुझ से और क्या चाहते हो? जो जो वस्तु तुम्हीं लोगों ने मुझे दी थीं वही अब फिर तुम्हें वापिस सौंपने मैं आ गया हूँ।"

लेकिन लोग चिल्ला उठे—"नहीं—नहीं, आप तो न्याय-परायण सम्राट् हैं। आपने जहरीले साँपों से इस राज्य को मुक्त कर दिया है—खूंख्वार भेड़ियों का नाम मिटा दिया है। आज तो हम आपके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के उद्देश्य से आये हैं। इस राज-मुकुट की शोभा आपके मस्तक पर और इस राजदण्ड की शोभा आपके हाथ में रहने में ही है।"

तब सम्राट् ने कहा—"मैं नहीं—अपने सम्राट् तो आप स्वयं हैं। जिस समय आप मुझे अयोग्य और निर्बल समझ रहे थे —वास्तव में—उस समय आप स्वयं निर्बल और अयोग्य थे। अब जो राज्य



का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है इसका कारण आपकी ही दृढ़ भावना है। मैं तो आप सबकी भावनाओं का प्रतीक-मात्र हूँ—मेरा अस्तित्व तो केवल आप के कार्यों में ही निहित है, संसार में शासक नाम की कोई वस्तु नहीं। स्वयं शासित् ही अपना शासन करने वाले हैं।"

सम्राट् ने मुकुट और दण्ड के सहित फिर अपने प्रासाद में प्रवेश किया और बड़े-बूढ़ों और नवयुवकों ने अपना-अपना रास्ता लिया। वे सभी सन्तुष्ट थे।

उनमें से प्रत्येक समझता था—मानो वह स्वयं सम्राट है और उसके एक हाथ में राजमुकुट और दूसरे में राजदण्ड है।





१४

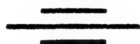
रेत पर

एक व्यक्ति ने दूसरे से कहा–"एक पुरानी घटना है। एक बार जब समुद्र में ज्वार आया था, मैंने अपनी छड़ी की नोक से तट की रेत पर एक पंक्ति लिख दी थी। उसे पढ़ने के लिए लोग आज भी ठहर जाते हैं और इस बात की सावधानी रखते हैं कि कहीं वह मिट न जाय।"

तब दूसरा बोला–"मैंने भी रेत पर एक पंक्ति लिखी थी–किन्तु उस समय समुद्र उतार पर था। बाद में महासागर की लहरों ने उसे धोकर बहा दिया। हाँ–यह तो बताओ तुमने लिखा क्या था?"

पहला व्यक्ति बोला–"मैंने तो लिखा था–"सोऽहमस्मि" (मैं 'वह' हूँ); पर, तुमने क्या लिखा था।"

तब दूसरे ने कहा–"मैंने लिखा था–मैं तो इस महासागर की केवल एक बूँद हूँ।"





१५

तीन उपहार

किसी समय बुखारा नगर में एक अत्यन्त उदार राजकुमार था। उसकी प्रजा उसे जी—जान से चाहती और बहुत आदर करती थी।

वहीं पर उसी समय एक और व्यक्ति हुआ–जो अत्यन्त दरिद्र था। उसकी जिह्वा राजकुमार की निन्दा में विष-वमन करने में निरन्तर रत रहती थी।

राजकुमार यह सब जानकर भी शान्त रहता। लेकिन एक दिन उसने उस पर विशेष रूप से विचार किया।

फलस्वरूप, एक शरद्-रात्रि में उस दरिद्र के द्वार पर राजकुमार का एक अनुचर उपस्थित हुआ। उसके साथ एक आटे की बोरी, एक साबुन की थैली और एक खाँड़ की पुड़िया थी।

अनुचर ने कहा–"राजकुमार ने आपको ये वस्तुएँ उपहार-स्वरूप भेजी हैं–क्यों कि आप उन्हें बहुत याद करते हैं।"

वह व्यक्ति गर्व से फूल उठा–क्यों कि उसने सोचा कि हो न हो राजकुमार ने ये चीजें उसका आदर करने के लिए भेजी हैं।

उसी अभिमान के नशे में वह पादरी के पास पहुँचा और

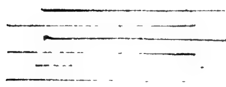


राजकुमार के इस कार्य की चर्चा कर बोला-"देखा आपने! राजकुमार भी मेरी सद्भावनाएँ पाने का इच्छुक है।"

इस पर पादरी ने उत्तर दिया-"खूब, राजकुमार कैसा चतुर है और तुम कितने नासमझ! वह इशारे में समझाता है। थोड़ी समझ से काम लो-आटा तुम्हारे खाली पेट के लिए है, साबुन तुम्हारे दुर्गन्धयुक्त शरीर के लिए और खाँड़ तुम्हारी कड़वी जबान को मधुर बनाने के लिए।

उस दिन से उस आदमी को मानो स्वयं अपने ऊपर लज्जा आने लगी। राजकुमार के प्रति घृणा और तीव्रतर हो उठी-और राजकुमार के कार्य का ऐसा अर्थ बताने के कारण पादरी महोदय से तो वह और जलभुन गया।

पर इसके बाद उसकी जिह्वा शान्त हो गई।





१६

शान्ति और युद्ध

तीन कुत्ते धूप खाते हुए बातें करते जाते थे।

पहले कुत्ते ने मानों स्वप्न देखते हुए कहा—"वास्तव में यह बड़े आनन्द की बात है कि हम इस 'श्वान-युग' में पैदा हुए हैं। भला, सोचो तो सही कितनी सहूलियत से हम लोग जल-थल और आकाश की यात्रा करते हैं। देखो न, हमारे आराम के लिए यहाँ तक कि हमारी आँख, कान और नासिका के सुख के लिए कैसे-कैसे आविष्कार हुए हैं।"

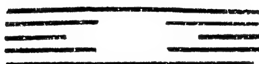
तब दूसरा कुत्ता बोला—"अजी, इतना ही नहीं, कला के प्रति भी हमारा झुकाव हुआ है। चन्द्रमा को देखकर हम लोग अपने पूर्वजों की अपेक्षा अधिक ताल-स्वर से भौंकते हैं। जब हम पानी में अपना प्रतिबिम्ब देखते हैं तो हमें अपना चेहरा पूर्वकाल की अपेक्षा अधिक सुघर नजर आता है।"

तब तीसरे कुत्ते ने कहा—"सबसे अधिक आश्चर्यजनक बात तो यह है कि इस श्वान-युग मे कितना सुस्थिर विचार-साम्य है।"

इसी समय उन्होंने देखा कि कुत्ता पकड़ने वाला चला आ रहा है।



तीनों कुत्ते छलांग मारते हुए गली में भागे। भागते-भागते तीसरे कुत्ते ने कहा—"प्राण बचाना चाहते हो तो जल्दी भागो—सभ्यता हमारे पीछे पड़ी हुई है।"





१७

नर्तकी

एक बार बिरकशा के राजा के दरबार में अपनी कला दिखाने की इच्छा से अपने संगीतकारों को लेकर एक नर्तकी उपस्थित हुई। वह दरबार में लाई गई। राजा के सामने उसने बांसुरी, वीणा और एकतारा की लय पर अपने नृत्य का प्रदर्शन किया।

उसने अग्नि-नृत्य, खंग-नृत्य और त्रिशूल-नृत्य किया—फिर नक्षत्र-नृत्य दिखाया और अन्त में वायु में झूमते हुए फूलों का नृत्य किया।

इसके बाद उसने राजसिंहासन के सामने आकर राजा को प्रणाम किया।

राजा ने उसे अपने निकट बुलाकर कहा—"अयि सुन्दरी! रूप और उल्लास की लाड़ली!! तुम्हारी कला का उद्गम क्या है? कैसे तुमने ताल, लय और स्वर के प्रत्येक अंग पर अधिकार पाया है?"

नर्तकी राजा के सामने झुककर सम्मान करती हुई बोली—"हे शक्तिशाली, प्रजावत्सल महाराज, आपके प्रश्न का उत्तर मैं





नर्तकी

नहीं जानती—मैं तो सिर्फ इतना जानती हूं कि दार्शनिक की आत्मा उसके मस्तिष्क में निवास करती है—कवि की आत्मा उसके हृदय में, गायक की गले में किन्तु नर्तकी की आत्मा उसके अंग-प्रत्यंग में बसती है।"





१८

दो संरक्षक देवदूत

एक संध्या को नगर के प्रवेश-द्वार पर दो देवदूत मिले। परस्पर अभिवादन के पश्चात् उनमें वार्तालाप चल पड़ा।

एक देवदूत ने पूछा—"आजकल तुम्हारे जिम्मे कौन सा कार्य लगाया गया है?"

दूसरे ने उत्तर दिया, "मुझे तो एक महापतित मनुष्य का अभिभावक नियुक्त किया गया है—वह उस नीचेवाली घाटी में रहता है और बड़ा ही दुराचारी और चरित्रहीन है। भाई, विश्वास करो यह कार्य बड़ा महत्त्वपूर्ण है—मुझे घोर परिश्रम करना पड़ता है इसमें।"

पहला देवदूत बोला—"उँह, यह तो साधारण सा काम है। मेरा कितने ही पापियों से पाला पड़ चुका है—कितनी ही बार मैं उनका अभिभावक भी रह चुका हूं। लेकिन अब मुझे एक धर्मात्मा की निगरानी करने का काम सौंपा गया है—यहाँ से थोड़ी ही दूर है उसकी झोंपड़ी। सच जानो भाई, यह कार्य अत्यन्त कठिन और सावधानी का है।"



तब दूसरे देवदूत ने कहा—"हूं—यह केवल तुम्हारी अहंमन्यता है। भला, पापात्मा के अभिभावक की अपेक्षा धर्मात्मा के अभिभावक का कार्य अधिक कठिन हो सकता है?"

पहले ने उत्तर दिया—"तुम्हारी इतनी हिम्मत! तुम मुझे अहंमन्य कहते हो। मेरा कहना सर्वथा सत्य है। मेरे विचार मे अहंमन्य तुम स्वयं हो।

तब दोनों देवदूतों में झगड़ा हो गई। बातों से नौबत हाथा-पाई पर जा पहुँची।

वे लड़ने में रत थे कि देवदूतों का प्रधान उधर से आ निकला। बीच-बचाव करते हुए उसने कहा—"छिः तुम लोग लड़ते क्यों हो? नगर के प्रवेश-द्वार पर देवदूतों का आपस में लड़ना कितनी शर्म की बात है। बताओ किस बात पर तुम्हारा झगड़ा हो रहा है।"

तब दोनों एक साथ बोल पड़े और प्रत्येक अपने सौंपे हुए काम की गुरुता प्रमाणित करते हुए अपने को अधिक गौरव का पात्र बतलाने लगा।

प्रधान ने सर हिलाते हुए मन ही मन कुछ सोचा, फिर कहा—"मेरे मित्रो! मैं अभी यह नहीं कहना चाहता कि तुम दोनों में से कौन अधिक प्रशंसा और पुरस्कार के अधिकारी है, लेकिन चूंकि तुम दोनों एक दूसरे के कार्य को सरल कह रहे हो, इसलिए शांति और सुरक्षा के हेतु मैं अपने अधिकार का प्रयोग करते हुए आज्ञा देता हूं कि तुम परस्पर



अपने कार्य बदल लो। जाओ, अब खुशी-खुशी अपना कार्य करो।"

यह आज्ञा पाकर दोनों फरिश्ते अपने-अपने रास्ते चल पड़े। दोनों ही मुड़-मुड़ कर प्रधान की ओर रोष भरी दृष्टि से देखते जाते थे। वे मन ही मन कह रहे थे—"हूं—ये देवदूतों के प्रधान! इनका यही रवैया है! इनके मारे हमारा जीवन कठिन से कठिनतर होता जा रहा है।"

और प्रधान वहीं खड़ा-खड़ा मन ही मन सोच रहा था—'इन अभिभावक देवदूतों के प्रति अधिक सचेत रहने—उनकी अधिक निगरानी रखने की जरूरत है।"





१६

प्रतिमा

एक समय की बात है। एक पहाड़ी प्रदेश में बसनेवाले व्यक्ति के पास अति प्राचीन कलाकार द्वारा गढ़ी प्रतिमा थी। वह उसके घर की दहलीज के बाहर औंधे-मुँह पड़ी रहती थी। कभी उसने उसकी ओर ध्यान भी नहीं दिया था।

एक दिन एक नगर-निवासी उसके दरवाजे के सामने से गुजरा। वह कला का ज्ञाता था। प्रतिमा को देखते ही उसने उसके स्वामी से पूछा—"बोलो, इसे बेचोगे?"

मूर्ति का स्वामी हँस कर बोला—" भाई, भला कोई इस भद्दे और मलीन पत्थर को भी खरीदेगा?"

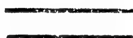
आगन्तुकने कहा—" लो, मैं तुम्हें इसके बदले में एक चांदी का सिक्का देता हूँ।"

उस पहाड़ी आदमी को आश्चर्य भी हुआ और खुशी भी। वह प्रतिमा एक हाथी पर लाद कर शहर पहुँचाई गई। कई पखवारे बीत गए। एक दिन उस पहाड़ी आदमी को किसी कामसे शहर जाना पड़ा। जब वह शहर की सड़क पर



चला जा रहा था तो उसने देखा कि एक दूकान के सामने भीड़ लगी हुई है। एक आदमी ज़ोर ज़ोर से पुकार कर कह रहा है—"आओ-संसार की अनुपम और सुंदरतम प्रतिमा देखो। एक श्रेष्ठ कलाकार की कला का उत्कृष्ट नमूना। प्रवेश-शुल्क केवल दो रुपए।"

पहाड़ी आदमी दो रुपए देकर दूकान में उसी प्रतिमा को देखने गया जिसे उसने एक रुपए में बेंच दिया था।





१०

विनिमय

एक बार एक चौराहे पर एक निर्धन कवि का एक धनी मूर्ख से साक्षात्कार हुआ। दोनों में जो बातचीत छिड़ी उसमें अपने जीवन के प्रति उनके असन्तोष का स्वर ही सब से ऊँचा था।

उसी समय उधर से एक स्वर्ग का दूत आ निकला, उसने दोनों के कन्धों पर अपना हाथ रख दिया, आश्चर्य कि दोनों व्यक्तियों के गुण-अवगुण एक दूसरे से अदल-बदल गये।

दोनों बिदा हुए। लेकिन बड़ी विचित्र बात थी कि जब कवि ने आँखें खोलकर देखा तो उसे अपने हाथों में सरकती हुई शुष्क रेत के सिवाय कुछ नहीं मिला।

और जब मूर्ख ने अपनी आंखें बन्द कीं तो उसे अपने हृदय में चलते-फिरते बादलों के सिवाय कुछ नजर नहीं आया।





२१

प्रेम और घृणा

एक स्त्रीने एक पुरुष से कहाः—"मैं तुझे प्यार करती हूँ।" और पुरुष ने कहाः—"मुझे भी तुम्हारे प्रेम का अधिकारी बन सकने की आन्तरिक लालसा है।"

तब स्त्रीने कहा—"शायद तुम मुझसे प्रेम नहीं करते।" इस पर पुरुष केवल उसे एकटक देखता रह गया—बोला कुछ नहीं।

तब स्त्री चिल्ला उठी—"मैं तुमसे घृणा करती हूँ।" और पुरुष ने कहा—"मैं तुम्हारी घृणा का अधिकारी बन सकूँ, यह भी मेरी आन्तरिक अभिलाषा है।"



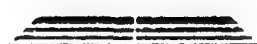


२२

स्वप्न

एक आदमी ने एक स्वप्न देखा। जागने पर वह अपने ज्योतिषी के पास गया और उससे उसका अर्थ जानने इच्छा प्रकट की।

भविष्यवक्ता ने कहा—"यदि तुम अपने जागृतिकाल के स्वप्नों की बात करो तो मैं उनका अर्थ बतलाऊं। निद्राकाल के स्वप्नों तक न तो मेरी बुद्धि की पहुँच है और न तुम्हारी कल्पना की रसाई।"





२३

पागल

एक पागलखाने के बगीचे में एक युवक से मेरी भेंट हो गई। उसका चेहरा पीला, सुन्दर और विस्मय की भावनाओं से भरा हुआ था।

मैं उसके बगल में ही बेंच पर जा बैठा और उससे पूछा—"अरे, तुम यहां कैसे आये ?"

उसने साश्चर्य मेरी ओर देखकर कहा—"आपका प्रश्न है तो अजीब--फिर भी जबाब देता हूं। मेरे पिता और चाचा मुझे अपने अनुरूप बनाना चाहते हैं--मेरी माताजी मुझे अपने पिता की प्रतिमूर्ति देखना चाहती हैं। मेरी बहन मेरे सामने अपने नाविक पति का आदर्श उपस्थित करती है और मेरा भाई मुझे अपने समान अच्छा खिलाड़ी बनाने की बात सोचता है।"

" मेरे शिक्षक अर्थात् दर्शन, संगीत और तर्कशास्त्र के अध्यापक--सबके सब इस बात पर कटिबद्ध हैं कि वे मुझमें दर्पण की तरह अपना प्रतिबिम्ब देखें।"



"इसीलिये मुझे यहाँ आना पड़ा; यहां मैं अधिक स्वस्थता का अनुभव करता हूँ। कम से कम, अपना व्यक्तित्व तो है।"

तभी वह अचानक मेरी ओर घूम कर बोला, "लेकिन यह तो बताइये, आप यहां कैसे आए? क्या आपको भी आपकी शिक्षा और सद्बुद्धि ने यहाँ आने के लिए प्रेरित किया है?"

लेकिन मैंने उत्तर दिया, "नहीं, मैं तो एक दर्शक के रूप में आया हूँ।"

और उसने कहा, "अच्छा समझा, आप इस चहारदिवारी के बाहर के विस्तृत पागलखाने के निवासी हैं।"





२४

मेंढक

गर्मी का दिन था। एक मेंढक ने अपनी सहचरी से कहा—"जान पड़ता है कि हमारे रात्रि के गीतों से किनारे के मकान वालों को कुछ असुविधा अवश्य होती होगी।"

सुनकर उसकी सहचरी ने कहा—"हुँ–क्या वे दिन के समय अपने वार्तालाप से हमारी शांति भंग नहीं करते?"

मेंढक बोला—"लेकिन, यह तो मानना ही चाहिए कि रात्रि के समय गाते हुए हम कुछ ज्यादती कर देते हैं।"

इस पर सहचरी बोली—"अरे, वे भी तो दिन के समय व्यर्थ का बकवास करते और शोर मचाते रहते हैं।"

मेंढक ने कहा—"अच्छा, उस मोटे मेंढक के बारे में भी सोचो जो अपनी कर्कश वाणी से सारे पड़ोस की नींद हराम किये रहता है।"

सहचरी ने कहा—"लेकिन तुम उन राजनीतिज्ञों, धर्मोपदेशकों और वैज्ञानिकों की बात सोचो जो किनारे पर आकर अपनी चिल्लपों और चीख-पुकार से जमीन-आसमान गुँजा डालते हैं।"



तब मेंढक बोला—"कुछ भी हो, कम से कम हम इन मनुष्यों से अधिक शिष्ट बनें और रात्रि के समय बिलकुल शांत रहें। अपना संगीत अपने हृदय में ही निहित रखें—भले ही चन्द्रमा हमारा स्वर और तारे हमारा संगीत सुनने के लिए हमें प्रेरित क्यों न करें। हमें कम से कम एक-दो रात या फिर तीन रात चुप रहकर देखना चाहिए।"

सहचरी बोली—"बहुत अच्छा, मुझे स्वीकार है। देखें, तुम्हारे हृदय की इस उदारता का क्या परिणाम निकलता है।"

उस रात को सारे मेंढक चुप रहे, दूसरी रात को भी और तीसरी रात को भी।

लेकिन आश्चर्य की बात थी कि एक बातूनी स्त्री जो कि झील के किनारे रहा करती थी, जब तीसरे दिन प्रातःकाल नाश्ता करने बैठी तो अपने पति से चिल्लाकर बोली, "तीन रातें बीत गईं. मुझे नींद नहीं आई। मेरे कानों में जब तक मेंढकों की आवाज आती रहती थी मेरी नींद सुरक्षित रहती थी। अवश्य कोई अनहोनी घटना घटी है। जिससे तीन रातों से मेंढ़कों ने गाना बन्द कर रखा है; मैं तो अनिद्रा के कारण बस पागल जैसी हो रही हूँ।"

उस मेंढक ने यह सुनकर अपनी सहचरी की ओर मुँह करते हुए आँखें मटका कर कहा, "और हम लोग भी इस मौनावलम्बन के कारण पागल से हो रहे हैं। क्यों है न ऐसा ही?"

तब उसकी सहचरी ने उत्तर दिया—"जी हाँ, रात्रि की निस्तब्धता तो हमारे लिए असह्य थी और अब मैं ऐसा ख्याल करती हूँ कि जो अपनी निस्तब्धता को कोलाहल से पूर्ण रखना



चाहते हैं उन लोगों की सुविधा का ध्यान रखते हुए भी हमें अपना गाना बंद नहीं करना चाहिए।"

उस रात्रि को चन्द्रमा का उनके स्वर का और नक्षत्रों का उनके संगीत का आह्वान करना व्यर्थ नहीं गया।





२५

कानून और कानूनी सलाह

बात बहुत पुरानी है, जब एक बड़ा वैभवशाली और बुद्धिमान् राजा था। उसकी इच्छा हुई कि मैं अपनी प्रजा के लिए कुछ नियम बना दूँ।

उसने एक हजार भिन्न-भिन्न जातियों में से एक हजार विद्वान् व्यक्ति चुनकर अपनी राजधानी में निमन्त्रित किए और उनकी सलाह से नियम बनाने का कार्य सम्पादन हुआ।

लेकिन जब एक हजार कानूनी नियम लिखकर राजा के सामने रखे गए और जब उसने उन्हे पढ़ा, तो उसका हृदय रो पड़ा, उसे अनुमान भी न था कि उसके राज्य में हजार प्रकार के अपराध प्रचलित हैं।

तब उसने अपने अहलकार को बुलाकर मुस्कराते हुए स्वयं कुछ कानूनी नियम लिखवा दिए—जो गिनती में केवल सात थे।

वे एक हजार विद्वान् क्रुद्ध होकर वहाँ से चल दिए और अपने सजातियों के पास अपने बनाए हुए कानूनों सहित लौट गए। और



प्रत्येक जाति अपने विद्वान् द्वारा निर्मित कानून के अनुसार चलने लगी।

फलस्वरूप आज भी हजारों कानून प्रचलित हैं। आज भी उस विस्तृत देश में हजारों बन्दीगृह है, जिनमें कानून उल्लंघन करनेवाले हजारों स्त्री-पुरुष भरे पड़े हैं।

निस्सन्देह उस विस्तृत साम्राज्य के निवासी हैं तो उन्हीं एक हजार कानून-निर्माताओं की संतान, जिनमें बुद्धिमान् अकेला राजा ही था।





२६

आज और कल

मैंने अपने मित्र से कहा—"देखो वह उस व्यक्ति के बाहुओं पर किस तरह झुकी हुई है। कल वह इसी प्रकार मेरी बाहुओं पर झुक रही थी।"

और मेरे मित्र ने कहा—"कल वह मेरी बाहुओं पर भी इसी प्रकार झुक रही होगी।"

मैंने कहा, देखो, किस तरह वह उस व्यक्ति से बिल्कुल सट-कर बैठी है? कल ही वह मेरे पास इसी प्रकार बैठी हुई थी।"

और उसने उत्तर दिया, देख लेना कल वह मेरे पास होगी।

मैंने कहा, "देखो न, आज किस तरह वह उसके हाथ मे मदिरा-पान कर रही है। कल ही तो मेरा प्याला उसके अधरों पर था।"

वह बोला—"और कल मेरा प्याला वहाँ होगा।"

तब मैंने कहा—"देखो, वह उस व्यक्ति को कैसी प्रेमभरी दृष्टि से देख रही है और जरा उसकी आँखों मे समर्पण की भावना तो देखो। कल इसी प्रकार वह मेरी ओर देख रही थी।"



और मेरे मित्र ने कहा, "कल उसकी दृष्टि मेरी ओर होगी।"

मैंने पूछा, "सुनो, वह अपने प्रेमी को कैसे प्रेम-भरे गीत सुना रही है। कल यह गीत उसने मुझे सुनाए थे।"

और मेरे मित्र ने उत्तर दिया, "कल, ये ही गीत वह मुझे सुनायेगी।'

मैंने कहा, "देखो तो सही, वह उसका आलिङ्गन कर रही है। यही आलिङ्गन कल मेरे लिए था।"

मेरे मित्र ने कहा, ' कल यही आलिङ्गन मेरे लिए होगा।

तब मैंने कहा, "कैसी विचित्र स्त्री है!"

लेकिन उसने उत्तर दिया—"वह जीवन की तरह सबकी होकर रहती है, मृत्यु की तरह सब पर हावी रहती है और अनन्त-काल के समान सबको अपने गर्भ में समेट लेती है।



२७

दार्शनिक और मोची

एक दार्शनिक फटे जूते ले कर एक मोची की दूकान पर आया और मोची से बोला--"जरा इनकी मरम्मत तो कर दो।"

मोची ने कहा--"अभी तो मैं दूसरे के जूते ठीक कर रहा हूँ, और आप के जूतों की बारी आने के पहले कई और भी जूते ठीक करने हैं। आप अपने जूतों को यहीं छोड़ जाइए और लीजिए अपना काम चलाने के लिये यह दूसरी जोड़ी पहन लीजिये। कल आ कर अपने जूते ले जाइएगा।"

दार्शनिक लाल-पीला हो कर बोला, "मैं अपने ही जूते पहनता हूँ, दूसरों के नहीं।"

तब उस मोची ने कहा-"अच्छा, तब तो आप पूरे-पूरे दार्शनिक हैं, जो दूसरों के जूतों में अपने पैर नहीं डाल सकते। इसी सड़क पर एक दूसरे मोची की दूकान है, जो मेरी अपेक्षा दार्शनिकों के स्वभाव से अधिक परिचित है। आप कृपया उसके पास से मरम्मत करवा लें।"



२८

पुल के निर्माता

एण्टीओक नगर के बीचो-बीच हो कर आसी नदी समुद्र की ओर बहती है। नगर के इस पार के आधे भाग को उस पार के आधे भाग से मिलाने के लिए एक पुल का निर्माण किया गया था। एण्टीओक के खच्चरों की पीठ पर लाद कर भारी-भारी पत्थर ला कर लगाये गये थे।

जब पुल बन कर तैयार हो गया, तब एक स्तम्भ पर ग्रीक एवं आर्मीनियाँ की भाषा के अक्षरों मे लिखा गया—"सम्राट् एण्टी ओक्स (द्वितीय) द्वारा निर्मित।"

सभी लोग उस सुन्दर पुल पर हो कर मनोहर आसी नदी को पार करते थे।

एक संध्या को एक युवक, जिसे कुछ लोग अर्द्धविक्षिप्त समझते थे, उस स्तम्भ के पास आ कर रुक गया, जिस पर उपरोक्त शब्द अंकित थे। उसने उस लेख पर कोयले की स्याही पोत कर, उसी के ऊपर लिख दिया—"इस पुल के लिए पत्थर खच्चरों द्वारा पहाड़ी पर से लाये गये थे। इस पुल पर आ-जा कर तुम लोग एण्टीओक



के उन खच्चरों की पीठ पर सवारी कर रहे हो, जो वास्तव में इस पुल के निर्माता हैं।"

जब लोगों ने युवक के लेख को पढ़ा तो कुछ हँसने लगे, कुछ विस्मित भी हुए और कोई-कोई कहने लगे, "हां, हां, हम जानते हैं, यह उसी पगले छोकरे का काम है।"

लेकिन एक खच्चर ने दूसरे से हँसते हुए कहा, "क्या तुम्हें याद नहीं है कि हमीं ने उन पत्थरों को ढोया था? लेकिन आज तक यही कहा जाता रहा है कि इस पुल के निर्माता सम्राट एण्टीओक्स हैं।



२६

ज़ाद की समर-भूमि

ज़ाद की सड़क पर चलते हुए एक पथिक की भेंट पास ही गाँव के रहने वाले एक आदमी से हुई। पथिक ने सामने वाले विस्तृत क्षेत्र की ओर हाथ से संकेत करते हुए उससे पूछा, "यह वही युद्ध-क्षेत्र है न जहाँ सम्राट आलम अपने शत्रुओं पर विजयी हुआ था ?"

उस आदमी ने उत्तर देते हुए कहा, "यह स्थान कभी युद्ध-क्षेत्र नहीं रहा, यहाँ पर तो किसी समय ज़ाद नामक एक बड़ा नगर था, जो जला कर खाक कर दिया गया था। और देखो, इसीलिए अब यह बड़ी उपजाऊ भूमि है।

उस पथिक और उस आदमी ने अपनी-अपनी राह ली।

वह पथिक मुश्किल से आधा मील भी न जा पाया होगा कि उसे एक और आदमी मिला और उससे भी उसने उसी भूमि की ओर संकेत करते हुए पूछा, "तो यहीं पर किसी समय ज़ाद नामक बड़ा नगर था ?"

उस आदमी ने उत्तर दिया, "इस स्थान पर कभी कोई नगर था ही नहीं। हाँ, यहाँ पर किसी जमाने में एक मठ जरूर था जिसे



दक्षिण के लोगों ने नष्ट-भ्रष्ट कर डाला था।"

थोड़ी देर पश्चात्, उस पथिक को, जाद की उसी सड़क पर एक तीसरा आदमी मिला और उससे भी उसने उस विस्तृत मैदान की ओर हाथ उठा कर पूछा, "इसी स्थान पर तो कभी एक बहुत बड़ा मठ था न ?"

लेकिन उस आदमी ने उत्तर दिया, "यहाँ आस-पास में तो कभी कोई मठ नहीं रहा, हाँ, हमारे पूर्वज कहा करते थे कि एक बार इस स्थान पर बहुत बड़ा नक्षत्र-पिण्ड टूट कर अवश्य गिरा था।"

तब वह पथिक आश्चर्यान्वित होता हुआ आगे बढ़ा कि उस की भेंट एक वयोवृद्ध से हो गई, जिसका अभिवादन करते हुए उसने पूछा, "महोदय, इस सड़क पर मेरी तीन आदमियों से भेंट हो चुकी है जो यहीं के रहने वाले हैं, और प्रत्येक से मैंने इस विस्तृत-क्षेत्र के बारे में पूछ-ताछ की और प्रत्येक ने एक दूसरे की बात का खंडन करते हुए बिलकुल दूसरे से भिन्न बात बतलाई।"

तब उस वृद्ध पुरुष ने अपना शिर सीधा करते हुए उत्तर दिया, "मेरे मित्र, प्रत्येक व्यक्ति ने आप को सच्ची ही बात कही है। पर इन बातों को सुन कर उन पर सामूहिक और व्यापक दृष्टि से विचार कर, सत्य की शोध करने वाले बिरले ही मिलेंगे।"



३०

स्वर्ण-शृंखला

एक दिन कोलम्स के सालामीज नगर की ओर सड़क पर जाते हुए दो आदमियों का साथ हो गया। भरी दुपहरी में वे एक चौड़ी नदी के तट पर जा पहुँचे किन्तु उसे पार करने के लिए कोई पुल नहीं था। उनके लिए तैरने या किसी दूसरी अज्ञात सड़क की खोज करने के सिवा कोई और चारा भी न था।

उन्होंने आपस में कहा, "चलो तैर चलें, आखिर नदी कोई बहुत चौड़ी तो है नहीं।" और दोनों ही पानी में कूद पड़े और तैरने लगे।

उनमें से एक आदमी जो नदी और नदी के प्रवाह से परिचित था, बीच में पहुंचते ही साहस खो बैठा और तेज धार में बह चला। दूसरा आदमी जिसे आज तक तैरने का काम भी नहीं पड़ा था, सहज ही में नदी पार कर गया और दूसरे किनारे पर जा पहुँचा। लेकिन जब उसने अपने साथी को धार में हाथ-पैर मारते हुए देखा तो वह फिर पानी में कूद पड़ा और उसे भी सही-सलामत किनारे ले आया।

तब वह आदमी जिसके पैर उखड़ गये थे कहने लगा, "तुम



तो कहते थे कि तुम तैरना नहीं जानते फिर इतने विश्वास के साथ नदी कैसे पार कर गए ?"

तब दूसरे आदमी ने उत्तर दिया, "मेरे मित्र, क्या तुम यह पेटी नहीं देखते जो मेरी कमर से बँधी हुई है ? यह सोने की मोहरों से भरी हुई है, जिन्हें मैंने अपनी पत्नी और बच्चों के लिए, साल भर परिश्रम कर के उपार्जित किया है। यह इस पेटी की ही करामात है, जिसने मुझे नदी पार करने में समर्थ बनाया और स्त्री-बच्चों के पास पहुँचाया। और जब मैं तैर रहा था उस समय मेरी स्त्री और बच्चे मानों मेरे कन्धे पर थे।"

दोनों साथ-साथ सालामीज की ओर चल दिए।





३१

लाल मिट्टी

एक वृक्ष ने एक आदमी से कहा, "मेरी जड़ें लाल मिट्टी में दूर तक गई हैं और तभी तो मुझ में तुम्हें फल देने की सामर्थ्य है।"

तब उस आदमी ने वृक्ष से कहा, "देखो न, हमारे बीच कितनी समता है, मेरी जड़ें भी तो लाल मिट्टी के गर्भ में दूर तक गई हुई हैं और जो लाल मिट्टी तुम्हें फलदान की शक्ति देती है वही मुझे कृतज्ञ भाव से फल-ग्रहण करने की शिक्षा देती है।"





३२

वैरागी-उपदेष्टा

किसी जमाने में एक वैरागी था जो एक पखवारे में तीन बार नगर में जाया करता था और सार्वजनिक रास्तों पर लोगों को पारस्परिक आदान-प्रदान की भावना को जागरित करने का उपदेश दिया करता था। वह एक कुशल वक्ता था ही अतएव सारे देश में उसकी कीर्ति की धूम थी।

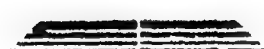
एक दिन संध्या समय तीन मनुष्य उसकी कुटिया पर जा पहुँचे। उसने उनका स्वागत किया। उन आदमियों ने कहा, "आप सदैव दान और सहयोग के बारे में कहा करते हैं और आप ही की शिक्षा है कि जिनके पास आवश्यकता से अधिक है उन्हें जरूरतमन्दों को देना चाहिए, और हमें इस बात में किंचित् सन्देह नहीं कि आप की सुप्रसिद्धि ने आप को निस्सन्देह वैभव-सम्पन्न बना दिया होगा; अतएव आप अपनी सम्पत्ति में से हमें भी कुछ देने की कृपा करें क्योंकि हमें आवश्यकता है।"

उस वैरागी ने उत्तर देते हुए कहा, "मेरे मित्रो, मेरे पास तो यह गुदड़ी है, यह चटाई और यह कमण्डल है। इसके सिवा कुछ



भी नहीं, यदि तुम्हारी इच्छा हो तो इन्हें ले जा सकते हो मेरे पास सोना-चाँदी तो है नहीं।"

इस पर उन्होंने घृणापूर्वक उसकी ओर अपना मुंह फेर लिया और अंतिम मनुष्य क्षण भर उसके द्वार पर खड़ा रह कर बोला, "धूर्त और कपटी कहीं के! तुम उन बातों का उपदेश करते फिरते हो जिस पर तुम स्वयं अमल करने में असमर्थ हो।"





३४

बड़ी पुरानी शराब

किसी जमाने में एक धनी मनुष्य था, जिसे अपने मदिरा-भंडार और भंडार की मदिरा का बड़ा गर्व था। उसके पास एक अति प्राचीन मदिरा से पूर्ण पात्र था, जिसे न जाने किस अवसर के लिए उसने सम्भाल कर रख छोड़ा था।

एक बार जब उसके यहां राज्य के गर्वनर का आगमन हुआ तब उसने मन में सोचा, "महज एक गर्वनर के लिए इसे क्या निकालूं!"

इसी प्रकार उसके यहां विशप का आगमन हुआ, लेकिन उसने मन में कहा, "नहीं, मैं वह पात्र कभी न खोलूंगा। भला वह उसकी कदर क्या जाने और उसकी नाक उस सुगन्ध की क्या खाक पहचान कर सकेगी!"

फिर एक अवसर पर उसके यहाँ उस देश का राजा भी आया। "उसने उसके साथ भोजन भी किया। लेकिन उसने तो यही विचार किया "यह मदिरा एक राजा जैसे व्यक्ति की तुलना में अधिक गौरव प्रद है।"

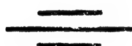


और यहाँ तक कि अपने भतीजे के विवाह के अवसर पर आए हुए मेहमानों को देख कर भी उसने सोचा, "नहीं, नहीं, यह पात्र इन मेहमानों के लिए भी नहीं खोला जा सकता।"

इसी प्रकार वर्ष-पर-वर्ष बीतते गए और उसकी मृत्यु भी हो गई। उस बुड्ढे को उसी प्रकार दफना दिया गया जिस प्रकार एक बीज को जमीन में बो देते हैं।

और जिस दिन उसे दफनाया गया उसी दिन मदिरा के अन्य पात्रों के साथ वह अति-प्राचीन मदिरा भी बाहर निकाली गई और पास-पड़ोस के रहने वाले किसानों ने उसको खूब ही छक कर पिया। किन्तु उसकी प्राचीनता का ज्ञान किसी को भी नहीं था।

उनके लिए तो प्याली में ढाली जाने वाली वस्तु एक साधारण मदिरा मात्र थी।





३५

दो काव्य

कई शताब्दियाँ बीत गईं, जब एथेन्स के राजमार्ग पर दो कवियों की भेंट हुई। दोनों एक दूसरे को देख कर फूले न समाये।

उनमें से एक ने दूसरे से पूछते हुए कहा—"इधर तुमने कौन-सी कविता लिखी है ? वह तुम्हारी वीणा की तान पर तो खूब जमती होगी।"

दूसरे कवि ने गर्व पूर्वक उत्तर दिया—"हाँ, अभी मैंने एक रचना समाप्त की है, वह मेरी और कविताओं में तो श्रेष्ठ है ही, लेकिन शायद ग्रीक भाषा में प्रणीत सभी काव्यों से भी श्रेष्ठ होगी। यह काव्य मेरे परम इष्ट देव की स्तुति में लिखा गया है।"

तब उसने अपने कपड़ों के भीतर से एक पाण्डु लिपि निकालते हुए कहा—"यह देखो, यह मेरे पास है और इसे सुना कर मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। चलो उस सफेद सनौवर की छाया के नीचे बैठें।"

उस कवि ने अपनी कविता सुनाई जो काफी लम्बी थी।

दूसरे कवि ने नम्रता पूर्वक कहा—"वास्तव में यह बड़े ही



उच्च कोटि का काव्य है। यह युग-युग तक जीवित रहने वाली चीज है और इसी से तुम्हारी ख्याति अमर रहेगी।"

अब पहले कवि ने जरा उपेक्षा के भाव से पूछा--"अच्छा यह तो बताओ, इन दिनों तुम क्या लिखते रहे हो?"

तब दूसरे ने उत्तर दिया-"मैंने लिखा तो है लेकिन बहुत थोड़ा। वह भी केवल आठ पंक्तियाँ--एक क्रीड़ा-मग्न बच्चे की स्मृति में!" और उसने वे पंक्तियां पढ़ कर सुना दीं।

पहले कवि ने कहा। "ऐसी ज्यादा बुरी तो नहीं है, कुछ ज्यादा बुरी तो नहीं है।"

बस, वे चल दिये।

और अब दो हजार वर्ष बीत जाने के बाद भी उस कवि की आठ पंक्तियाँ प्रत्येक भाषा में बड़े चाव और प्रेम से पढ़ी जाती हैं।

हाँ, दूसरी कविता वास्तव में, कितनी शताब्दियों से पुस्तकालयों और विद्वानों की आलमारियों में सुरक्षित अवश्य रखी रही है और लोगों का उसकी ओर ध्यान भी जाता है, फिर भी न तो लोग उसे पसंद ही करते हैं और न पढ़ते ही हैं।





३६

श्रीमती रूथ

एक बार तीन व्यक्तियों ने दूर से देखा कि हरी-भरी पहाड़ी पर एक श्वेत घर स्थित है। उनमें से एक ने कहा-"यही उन श्रीमती रूथ का घर है, जो एक पुरानी जादूगरनी है।"

दूसरे ने कहा—"तुम गलती करते हो। श्रीमती रूथ तो एक रूपवती महिला हैं। जो हमेशा अपने सपनों में लीन रहती हैं।"

तीसरे ने कहा—"तुम दोनों भ्रम में हो। श्रीमती रूथ तो इस विस्तृत भूमि की मालिकिन है और अपने किसानों का रक्त तक शोषण करने वाली है।"

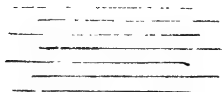
इस प्रकार वे श्रीमती रूथ के सम्बन्ध में बातें करते हुए चले जा रहे थे।

जब वे एक चौराहे पर पहुंचे, तो वहां एक वृद्ध से उनकी भेंट हो गई। उनमें से एक ने उससे पूछा—"क्या आप कृपा कर के श्रीमती रूथ के सम्बन्ध में कुछ बता सकेंगे जो उस पहाड़ी पर स्थित श्वेत मकान में रहती हैं?"

तब उस वृद्ध ने अपना सर उठा कर उनकी ओर मुस्करा कर



कहा–"मैं नब्बे वर्ष का हूं और जब मैं निरा बालक था, तभी से मुझे श्रीमती रूथ की कुछ-कुछ याद है। लेकिन श्रीमती रूथ को मरे हुए भी तो अस्सी वर्ष हो गए, तब से यह मकान बिलकुल खाली पड़ा है, जहां कभी-कभी उल्लू बोला करते हैं और कुछ लोगों का अनुमान है कि वहां प्रेतों का निवास है।"





३७

चूहा और बिल्ली

एक दिन सन्ध्या समय एक कवि की एक किसान से भेंट हो गई। कवि एकान्त प्रिय था और किसान संकोची स्वभाव का। फिर भी आपस में बातचीत होने लगी।

किसान ने कहा, "मैं तुम्हें एक छोटी-सी कहानी सुनाता हूँ, जिसे मैने अभी हाल ही में सुना है। एक बार एक चूहा जाल में फँस गया। जब वह प्रसन्नता पूर्वक उसके भीतर की मिठाई खा रहा था, तो पास ही एक बिल्ली खड़ी थी। चूहा पहिले तो डर गया, लेकिन फिर उसे विश्वास हो गया कि वह तो जाल में नितान्त सुरक्षित है।

तब बिल्ली बोली, "मेरे मित्र, यह तुम्हारा अन्तिम कौर है।"

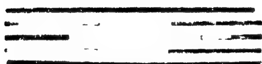
"निस्संदेह" चूहे ने उत्तर दिया, "मुझे तो एक जीवन मिला है, इस लिए मुझे मरना भी एक ही बार पड़ेगा। पर अपनी बात सोचो। लोग कहते हैं—तुम्हें नौ जीवन प्राप्त हैं। क्या इसका आशय यह नहीं है कि तुम्हें मरना भी नौ बार पड़ेगा?"

इतना कह कर किसान ने कवि की ओर देख कर पूछा, "क्या



तुम्हें यह कहानी एक विचित्र नहीं जान पड़ती ?"

कवि ने उसे कुछ उत्तर नहीं दिया, लेकिन अपने मन में कहता हुआ आगे चल दिया, "निस्सन्देह हमें नौ जीवन प्राप्त हैं। हाँ, निस्सन्देह नौ जीवन, हमें मरना भी नौ बार पड़ेगा। हाँ, नौ बार। कदाचित् इससे तो अच्छा था हमें एक जीवन मिला होता—जाल में फँसा हुआ-एक किसान का जीवन, हाथ में अन्तिम ग्रास लिए हुए। सचमुच क्या हम जंगल और बीरान में रहने वाले शेरों के भाई-बंद नहीं हैं ?"





३८

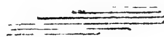
श्राप

एक बुड्ढे ने एक बार मुझसे कहा, "तीस वर्ष हुए, एक नाविक मेरी कन्या को लेकर भाग गया, मैंने दोनों को अपने मन में बुरी तरह कोसना शुरू किया, क्योंकि दुनिया में अपनी बेटी को ही मैं सबसे ज्यादा प्यार करता था।

"बहुत दिन नहीं बीतने पाए कि वह युवक नाविक अपने जहाज सहित समुद्र-तल में जा पहुँचा—उसी के साथ मेरी प्यारी बेटी भी सदा के लिए खो गई।

"इसलिए तुम मुझे एक युवक और युवती का हत्यारा समझो। मेरा श्राप ही दोनों के नाश का कारण था। अब जब मैं कब्र में जाने को प्रस्तुत हूँ—ईश्वर से क्षमा-याचना करता हूँ।"

यह सब उस बुड्ढे ने कहा तो सही, फिर भी उसके कथन में दम्भ का आभास था और ऐसा प्रतीत होता था, कि उसे अब भी अपनी श्राप देने की शक्ति पर अभिमान है।





२६

दाड़िम

एक समय की बात है। एक आदमी के बगीचे में दाड़िम के बहुत से वृक्ष थे। शिशिर ऋतु आते ही वह दाड़िमों को चाँदी के थालों में सजा कर अपने द्वार पर रख दिया करता था। उन थालों पर लिखा होता था, "आप कम-से-कम एक तो ले ही लें। मैं आपका स्वागत करता हूँ।"

लेकिन लोग आते और चले जाते, कोई फल उठाता तक नहीं।

तब उस आदमी ने गम्भीरता पूर्वक विचार करने के बाद दूसरे शिशिर में अपने घर के द्वार पर उन चाँदी के थालों में एक भी दाड़िम नहीं रखा-बल्कि उन थालों पर उसने बड़े-बड़े अक्षरों में लिख रखा, "हमारे पास सभी स्थानों से कहीं अच्छे दाड़िम मिलेंगे, पर उनका मूल्य भी दूसरे दाड़िमों की अपेक्षा अधिक लगेगा।"

और तब देखा, पास पड़ोस के सभी स्त्री-पुरुष उन्हें खरीदने के लिए टूट पड़े।



४०

एक देवता या अनेक देवता

खिलाफिस नगर में मन्दिरों की सीढ़ियों पर चढ़ कर एक सूफी भाषण दिया करता था, जिसमें वह 'बहुदेवतावाद' का समर्थन किया करता था। लोग अपने मन में कहते थे,"इसमें कोई नई बात नहीं, यह तो हम भी जानते हैं। वे तो सदा हमारे साथ हैं और हर कहीं साथ ही रहते हैं।"

थोड़े दिन पश्चात् एक दूसरा आदमी सरे बाजार खड़ा हो कर लोगों को 'नास्तिकता' की बात बतलाने लगा। बहुत से लोग जिन्होंने उसे सुना, उसके उपदेश से खूब प्रसन्न हुए,क्योंकि वे सदैव देवताओं से भय जो खाते रहते थे।

और किसी दूसरे दिन एक और उपदेशक आया। उसकी वाणी में तेज था। उसने कहा, "देवता एक है।" इस पर लोग घबराए, क्योंकि वे कई देवताओं की अपेक्षा एक देवता के दण्ड-विधान से अधिक डरते थे।

उसी ऋतु में एक और व्यक्ति आ पहुँचा और उसने लोगों से कहना शुरू किया, "देवता तो तीन हैं और वे एक-रूप होकर



वायु पर निवास करते हैं। उनकी एक महान और दयालु माता है, जो उनकी पत्नी भी है और बहन भी है।"

तब तो सभी सन्तुष्ट हो गए, क्योंकि उन्होंने अपने मन में सोचा, "हमारे अपराधों के सम्बन्ध में, एक-रूप में तीन देवताओं का आपस में मत-भेद तो होगा ही और इसके अतिरिक्त उनकी कृपालु माता हम अनाथ और निर्बलों का अवश्य पक्ष लेगी।"

फिर भी, आज भी खिलाफिस नगर में ऐसे लोग हैं, जो 'कई देवता हैं, अथवा देवता हैं ही नहीं, या केवल एक देवता है, या एक रूप में तीन देवता हैं और उनकी एक कृपालु माता है' आदि विषयों को ले कर आपस में लड़ते-झगड़ते और तर्क वितर्क करते रहते हैं।





४१

एक बधिर महिला

किसी धनी आदमी की एक युवती पत्नी थी, जो वज्र बधिर थी।

एक दिन प्रातः समय जब वे लोग नाश्ता कर रहे थे, उसने अपने पति से कहा--"कल जब मैं हाट में गई थी, तब वहाँ दमिश्क के रेशमी थान, भारतवर्ष की चादरें, फारस के कंठहार और यमन की चूड़ियाँ देखने में आई थीं। मालूम होता है कि ये वस्तुएं अभी-अभी हमारे नगर के काफिले के साथ आई हैं। और जरा मुझे देखो, मै एक सम्पन्न व्यक्ति की स्त्री होते हुए भी चिथड़े जैसे वस्त्र पहिने हुए हूँ। मैं उन सुन्दर वस्तुओं में से कुछ अवश्य खरीदूंगी।"

उसके पति ने काफी पीते हुए कहा, "मेरी प्रिये, कोई कारण नहीं कि तुम बाजार में जा कर अपनी पसन्द की चीजें न खरीदो।"

तब उस बहरी स्त्री ने कहा-" 'नहीं!' तुम हमेशा 'नहीं नहीं' कह देते हो। क्या मैं यह चिथड़े लपेटे अपने मित्रों के सामने अपने घरवालों और तुम्हारी सम्पदा को लज्जित करती रहूं?"

पति ने कहा, "मैंने तो कभी 'नहीं' नहीं की। तुम निस्संकोच बाजार में जा कर सुन्दर-से सुन्दर वस्त्र और बहुमूल्य जवाहिरात,



जो तुम्हारे नगर में आए हुए हैं, खरीदो।"

फिर भी उसकी पत्नी ने अपने पति के शब्दों को सुनने में भूल की और उसने उत्तर दिया, "सारे धनवानों मे तुम से बढ़ कर कृपण कोई दूसरा नहीं। तुम सौन्दर्य और सजावट की प्रत्येक चीज के लिए इन्कार कर देते हो, जब कि नगर की मेरी ही उम्र वाली अन्य स्त्रियाँ सुन्दर-सुन्दर मूल्यवान कपड़ों से सज-धज कर नगर के बगीचों में घूमती फिरती हैं।"

इतना कह कर वह रोने लगी। और जब उसके आँसू उसके वक्षस्थल पर गिरने लगे, तब वह पुनः चिल्ला कर बोला—'जब कभी मुझे किसी वस्त्र या आभूषण की चाह होती है, तब तुम हमेशा 'न' कर देते हो।'

तब वह विचलित हो उठा और खड़े हो कर अपने बटुए से मुट्ठी भर अशर्फियाँ निकाल कर उसके सामने रख दीं और बड़ी नम्रता से बोला—"मेरी प्रिये! बाजार जाकर जो तुम्हारी इच्छा हो, खरीद लाओ।"

उस दिन से जब कभी उस बहरी स्त्री को किसी वस्तु की दरकार होती, तो वह अपने पति के सामने अपनी आँखों में मोती जैसे आँसू भर कर खड़ी हो जाती थी और उसका पति चुपचाप मुट्ठी भर अशर्फियाँ उसके आँचल मे डाल देता था। एक बार, संयोग की बात है कि वह नवयुवती किसी दूसरे युवक से प्रेम करने लगी, जिसे बड़ी लम्बी-लम्बी यात्राएँ करने का शोक था। जब कभी वह प्रवास में होता तो वह एकान्त कमरे मे बेठ कर रोया करती थी।



इधर जब कभी उसका पति उसे इस प्रकार रोते हुए देख लेता तो वह अपने मन में कहने लगता, "बाज़ार में शायद कोई नया काफ़िला रेशमी कपड़े और बहुमूल्य जवाहिरात लेकर आया होगा।"

और वह मुट्ठी भर अशर्फ़ियाँ ले कर उसके सामने रख दिया करता था।





४२

खोज

एक हज़ार वर्ष पूर्व लेबेनन के ढाल पर दो दार्शनिक आ मिले। एक ने दूसरे से पूछा—"कहाँ जा रहे हो तुम ?"

दूसरे ने उत्तर दिया—"मैं तो यौवन के निर्झर की तलाश में जा रहा हूँ। मेरे ध्यान में इन्हीं किन्हीं पहाड़ियों के बीच उसका सोता प्रस्फुटित होता है। मुझे कुछ ऐसे लिखित प्रमाण मिले हैं, जो उसका उद्गम पूर्व की ओर बताते हैं। पर तुम, तुम क्या खोज रहे हो ?

पहले आदमी ने उत्तर दिया—"मैं तो मृत्यु के रहस्य की तलाश में हूं।"

तब दोनों दार्शनिकों ने एक-दूसरे के प्रति यही धारणा बना ली कि दूसरा उसकी महान विद्या से नितांत अपरिचित है। वे आपस में लड़ने-झगड़ने और एक दूसरे के आध्यात्मिक अंध-विश्वास की आलोचना करने लगे।

दोनों दार्शनिकों के शोर से सारा वायुमण्डल गूंज उठा। तभी उधर से एक अजनबी आ निकला, जो अपने गांव में महा-



मूर्ख समझा जाता था। जब उसने दोनों को गर्मागर्म बहस करते हुए देखा तो वह थोड़ी देर खड़ा-खड़ा उनके तर्कों को सुनता रहा।

उसके बाद वह उनके निकट आकर बोला—"भले मानुसों, ऐसा ज्ञात होता है कि तुम दोनों वास्तव में एक ही सिद्धांत के मानने वाले हो और तुम दोनों कह भी एक ही बात रहे हो। अंतर तो केवल शब्दों का है। तुममें से एक तो यौवन के निर्झर की तलाश कर रहा है, दूसरा मृत्यु का रहस्योद्घाटन करना चाहता है, पर हैं तो दोनों एक ही, और दोनों ही एक रूप होकर तुम दोनों में बसते हैं।"

वह अपरिचित "महात्माओं' आपसे बिदाई लेता हूँ!" कह कर चल दिया। जाते समय वह खूब हँसा।

दोनों दार्शनिकों ने चुपचाप कुछ क्षणों के लिए एक दूसरे की ओर देखा और तब वे दोनों भी हँस पड़े। और उनमें से एक ने कहा—"अच्छा, तो अब हम दोनों मिल कर खोज करें न।"





४३

राजछत्र

किसी राजा ने अपनी पत्नी से कहा, " तुम में रानी बनने की योग्यता का अभाव है, तुम इतनी फूहड़ और अशिष्ट हो कि मेरी सहधर्मिणी बनने के उपयुक्त नहीं।"

पत्नी ने उत्तर दिया--"तुम राजा कहलाने का गर्व तो करते हो, लेकिन कोरी बातें बनाने के सिवाय तुम्हें आता क्या है?"

इन शब्दों से राजा उत्तेजित हो उठा और उसने अपना सोने का राजछत्र हाथों में लेकर रानी के मस्तक पर दे मारा।

ठीक उसी समय राज्य के न्याय मंत्री ने प्रवेश करते हुए कहा-" श्रीमान्, इस राज्यछत्र को राज्य के सबसे बडे कलाकार ने गढ़ा था। आप और आपकी रानी की याद किसी दिन मिट जायगी, फिर भी इस राजछत्र की इसके असाधारण सौंदर्य के कारण पीढ़ियों तक रक्षा की जायगी। और श्रीमान् अब तो इसे और भी अधिक गौरव से लोग याद करेंगे क्योंकि आपने महारानीजी के मस्तक का रक्त इस पर सींच दिया है।"



४४

मार्ग

पहाड़ियों के बीच, अपने पुत्र के साथ एक स्त्री रहा करती थी। वह उसका पहला ही और इकलौता पुत्र था।

उसके लड़के की ज्वर से मृत्यु हो गई। उस समय चिकित्सक भी पास ही खड़ा था।

उसकी माँ शोक से पागल हो गई और जोर-जोर से चिल्ला-कर उस चिकित्सक की मिन्नतें करती हुई कहने लगी, "बताओ मुझे बताओ, उसकी चेतना शांत और उसकी मधुर वाणी मूक कैसे हो गई?"

चिकित्सक ने कहा—"ज्वर के कारण।"

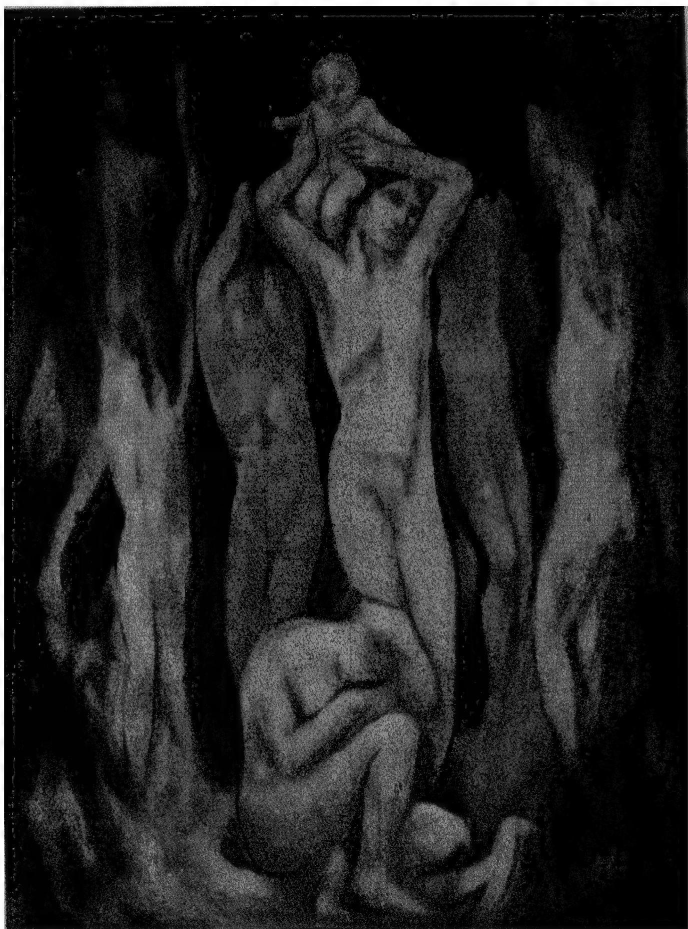
माँ ने फिर पूछा—"आखिर ज्वर है क्या?"

चिकित्सक ने उत्तर दिया—"यह मैं तुम्हें समझा नहीं सकता, वह तो ऐसी बीमारी है, जो शरीर में प्रवेश कर जाती है और इतनी सूक्ष्म है कि हमारे मानवीय नेत्र उसे देखने में असमर्थ हैं।"

इसके बाद चिकित्सक चला गया। वह स्त्री मन-ही-मन कहती रही—"इतनी सूक्ष्म कि मानवीय नेत्र उसे देखने में असमर्थ हैं।"



बटोही



इकलौता पुत्र

जब संध्या समय पुरोहित उसे धैर्य बँधाने आया तो वह रो पड़ी और चिल्लाते हुए कहने लगी—"हाय रे! मेरा बच्चा मुझ से क्यों बिछुड़ गया, मेरा इकलौता बेटा! मेरा प्रथम-जात पुत्र!"

तब पुरोहित ने कहा—'मेरी बेटी! ईश्वर की यही इच्छा थी।"

तब उस स्त्री ने पूछा—"ईश्वर क्या है और कहाँ है? मैं ईश्वर से अवश्य मिलूंगी, मैं उसे कलेजा चीरकर दिखाऊँगी और अपने हृदय के रक्त को उसके चरणों पर चढ़ाऊँगी। बताओ मैं उसे कहाँ पा सकूँगी?"

उस पुरोहित ने उत्तर दिया—"ईश्वर तो विराट स्वरूप है। वह हमारे मानवीय नेत्रों द्वारा नहीं देखा जा सकता।"

तब वह स्त्री चिल्ला पड़ी—"असीम विराट की इच्छानुसार असीम सूक्ष्म ने मेरे बच्चे का जीवन ले लिया। तब हम क्या हैं? तब हम क्या हैं?

इतने ही में उस स्त्री की माँ ने मृत बालक का कफ़न लिए हुए कमरे में प्रवेश किया। उसने पुरोहित के शब्दों को और अपनी पुत्री के रुदन को सुन लिया था। उसने कफ़न एक ओर रख कर अपनी पुत्री का हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा—"मेरी पुत्री, हम स्वयं ही अत्यंत सूक्ष्म और अनन्त विराट हैं और हम्हीं दोनों का मध्य-वर्ती मार्ग भी हैं।"



४५

व्हेल और तितली

एक बार संध्या समय एक स्त्री और पुरुष को एक ही गाड़ी में बैठने का सुयोग मिला। दोनों में पूर्व परिचय भी था।

वह पुरुष कवि था और जैसे ही वह उस स्त्री के समीप बैठा वह कहानियों द्वारा उसका मनोरंजन करने लगा। कुछ तो उसकी स्वयं की बनाई हुई कहानियां थीं और कुछ दूसरों की।

लेकिन उसकी बातों के बीच ही उस स्त्री को नींद आ गई। तभी अकस्मात् गाड़ी में धक्का लगा और वह जाग पड़ी और कहने लगी--"मैं आपकी 'जोना और ह्वेल' वाली कहानी की व्याख्या की सराहना करती हूँ।"

कवि ने उत्तर दिया--"लेकिन श्रीमती मैं तो, आपको अपनी 'तितली और श्वेत गुलाब' वाली कहानी सुना रहा था और यह सुना रहा था कि उनका एक दूसरे के प्रति कैसा व्यवहार था।"



४६

संक्रामक शांति

एक कुसुमित डाल ने अपने पड़ोस की टहनी से कहा--"आज का दिन तो बिलकुल नीरस और सूना है।" तब उस टहनी ने उत्तर दिया--"निसंदेह यही बात है।"

उसी समय उस टहनी पर एक गोरैया आ बैठा और तत्पश्चात् उसके निकट ही दूसरा गोरैया भी।

उनमें से एक ने चहचहाते हुए कहा--"मेरी स्त्री मुझे छोड़कर चली गई।"

तब दूसरे ने जरा जोर से कहा--" मेरी स्त्री भी चली गई, जो अब वापस नहीं आने की-और मुझे परवाह भी क्या है ?"

बस दोनों चूँ-चूँ करके लगे एक दूसरे को भला बुरा कहने और लड़ने और ऊपर उड़ कर शोर मचाने ।

एकाएक दो और गोरैयाँ आकाश में उड़ती हुई आ पहुँची और दोनों क्रोधित पक्षियों के पास आकर चुपचाप बैठ गई। बस शोर बंद हो गया और शांति स्थापित हो गई ।

तब वे चारों अपने जोड़े बनाकर उड़ गए ।



तत्पश्चात् उस डाल ने अपनी पड़ोसिन टहनी से कहा---"यह तो कोलाहल का बवंडर-सा था।" तब वह टहनी बोली---"इसे चाहे जो कहो, अब तो सारा वातावरण शांत है। और यदि ऊपरी वायु शांत हो, तो मेरा ऐसा विश्वास है कि नीचे रहने वाले भी शांति बनाए रख सकते हैं। क्या, तुम भी वायु के साथ झोंका लेकर मेरे निकट न आओगे ?"

तब उस डाल ने कहा---"ओह, यह तो शांति प्राप्त करने का सुयोग है। कहीं ऐसा न हो कि वसंत बीत जाय।"

और उसी समय वायु का एक सबल झोंका आया और वह उससे प्रेरित हो उस टहनी के आलिङ्गन में बँध गया।



४७

छाया

जून का महीना था। एक दिन एक घास ने सनोवर की छाया से कहा--"तुम प्रायः मेरे दाएँ-बाएँ आ-आ कर मुझे परेशान करती रहती हो।"

उस छाया ने उत्तर में कहा--"मेरा इसमें क्या दोष ? जरा ऊपर की ओर देखो। यह वृक्ष हवा के झूले पर पूर्व से पश्चिम की की ओर, सूर्य और धरती के बीच झोंके ले रहा है।"

तब उस घास ने ऊपर की ओर देखा; उसके जीवन में वृक्ष को देखने का यह पहला ही अवसर था, उसने अपने मन में कहा--"ऐसा भी क्या, है तो वह भी घास ही, जरा बड़ी हुई तो क्या ?"

फिर वह चुप हो गई।





४८

वृद्धावस्था

युवक कवि ने राजरानी से कहा—"मैं तुमसे प्यार करता हूँ।" और राजरानी ने उत्तर दिया—"मेरे बच्चे, मैं भी तुमसे स्नेह करती हूँ।"

"परन्तु मैं तुम्हारा बच्चा नहीं हूँ। मैं मनुष्य हूँ। मैं तुम्हें प्यार करता हूँ।"

रानी ने कहा—"मैं कितने ही पुत्र और पुत्रियों की माता हूँ और वे भी अपने पुत्र-पुत्रियों के पिता और माता बन चुके हैं। और मेरा एक पौत्र तो अवस्था में तुमसे कहीं बड़ा है।"

तब युवक ने फिर कहा—"फिरभी मैं तुम्हें प्यार करता हूँ।"

उसके बाद अधिक दिन नहीं बीते कि राजरानी की मृत्यु होगई। लेकिन इसके पूर्व कि उसका अंतिम श्वास पृथ्वी की महान् श्वास में विलीन हो, उसने अपने मन में कहा "मेरे प्यारे, मेरे बच्चे, युवक-कवि, बहुत सम्भव है कि किसी दिन हम तुम फिर मिलें और उस समय मेरी अवस्था सत्तर वर्ष की नहीं होगी।"



४६

ईश्वर की खोज

दो आदमी एक घाटी में घूम रहे थे। एक ने पहाड़ की ओर अपनी अँगुली से निर्देश करते हुए कहा—"देखते हो न, वहाँ एक कुटी है, जिसमें एक आदमी रहता है, जिसने बहुत दिनों से वैराग्य ले रखा है, वह केवल ईश्वर की खोज में लगा रहता है, संसार में उसकी और कोई कामना नहीं है।"

तब दूसरे आदमी ने कहा—"जब तक वह इस कुटिया के एकान्त वास का त्याग करके फिर हमारे संसार में वापस नहीं आजाएगा, तब तक उसके लिए ईश्वर-प्राप्ति सम्भव नहीं। उसे चाहिए कि वह हमारे सुख दुःख का भागी बने; शादी, भोज के अवसरों पर नाचने वालों के साथ नाचे और मृत्यु के अवसर पर रोते हुए मनुष्यों का साथ दे।"

पहला आदमी इस बात से अपने मन में संतुष्ट तो हुआ, लेकिन स्वभाव वश बोला—"जो कुछ तुम कहते हो, उससे मैं सहमत तो हूँ, फिर भी मेरा ऐसा विश्वास है कि वह सन्यासी एक सत्पुरुष



है और यह तो तुम्हें मानना ही पड़ेगा कि अपने गुणों का प्रदर्शन करने वालों से भरी इस दुनिया में एक सत्पुरुष अपने को छिपा कर भी संसार का अधिक उपकार करता है।"





५०

नदी

कदीशा की घाटी में,-जिसमें होकर एक वेगवती नदी बहती है, दो छोटे-छोटे जल-प्रवाह आ मिले और आपस में बातचीत करने लगे।

एक जल-प्रवाह ने कहा-"मेरे मित्र, तुम्हारा कैसे आना हुआ, रास्ता ठीक था न ?"

तब दूसरे ने उत्तर दिया—" रास्ते की न पूछो। बड़ा ही बीहड़ था। पनचक्की का चक्र टूट गया था और उसका संचालक, जो मेरी धारा को अपने पौधों की ओर ले जाता था, चल बसा। किसी तरह संघर्ष करके, धूप में अपने निकम्मेपन को सूर्य-स्नान कराने वालों की गंदगी को साथ लिए मैं सरक आया हूँ। लेकिन मेरे बन्धु, तुम्हारा पथ कैसा था ?"

तब पहले ने उत्तर देते हुए कहा-"मेरा पथ तो बिल्कुल भिन्न था। मैं तो पहाड़ी से उतरकर सुगंधित पुष्पों और लचीली बेलों के मध्य से होकर आरहा हूँ। स्त्री और पुरुष मेरे जल को अपनी रजत-प्यालियों में भर-भर कर पान करते थे। किनारे पर

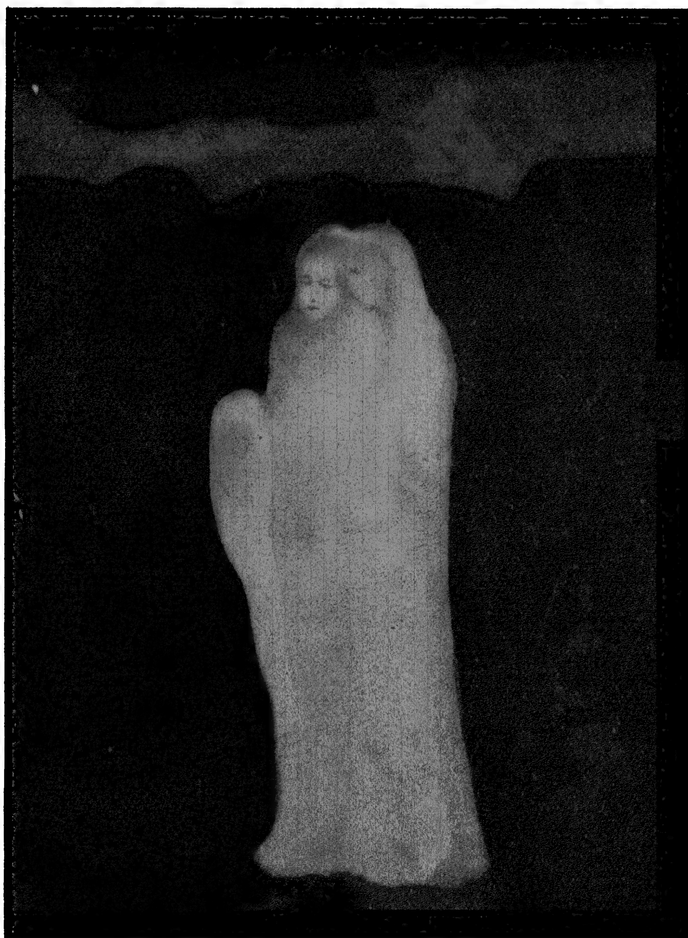


बैठ कर छोटे-छोटे बच्चे, अपने गुलाबी पैरों को, पानी में चलाते थे। मेरे चारों ओर उल्लास और मधुर संगीत का जमघट था। मुझे तो तुम पर दया आती है कि तुम्हारा मार्ग इतना सुखमय नहीं रहा।"

उसी समय नदी ने ऊँचे स्वर से कहा-"चले आओ, चले आओ, हम सब समुद्र की ओर जा रहे हैं। चले चलो, चले चलो, अब अधिक वार्तालाप न करो। बस मुझमें मिल जाओ। हम सब समुद्र से मिलने जा रहे हैं। चले आओ, चले आओ, मुझमें मिलते ही अपनी यात्रा के सारे दुख-सुख विस्मृत हो जाएँगे। चले आओ, बस चले आओ, हम अपनी समुद्र-माता का स्पर्श पा कर यात्रा की सारी बातें भूल जायेंगे।"







हर्ष-शोक

५१

दो शिकारी

बसंत ऋतु में, एक दिन एक झील के तट पर, हर्ष और शोक मिले। अभिवादन के बाद वे दोनों जलाशय के पास बैठ कर बातें करने लगे।

हर्ष तो पृथ्वी की सुषमा का, पर्वत और वन्य-जीवन के नित्य-प्रति के चमत्कारों का और प्रभात तथा संध्याकालीन संगीत का वर्णन करने लगा।

तब शोक बोला, और जो कुछ हर्ष ने कहा था उसके साथ उसने सहमति प्रकट की; क्योंकि शोक समय के आकर्षण और उसके सौंदर्य से परिचित था। जिस समय शोक मैदानों और पर्वतों की बसंत-श्री का वर्णन कर रहा था, उस समय उसकी वाणी सजीव हो उठी थी।

इस प्रकार हर्ष और शोक काफी समय तक आपस में वार्तालाप करते रहे और वे सभी जानी हुई बातों पर एक मत थे।

उसी समय जलाशय के दूसरे तट पर दो शिकारी आ पहुंचे और जैसे ही उन्होंने झील के उस पार दृष्टि दौड़ाई, कि उनमें से



एक ने कहा--" अरे, आखिर वे दोनों हैं कौन ?" और तब दूसरा बोला—"क्या कहा दो ? मैं तो केवल एक ही को देख रहा हूं।"

तब पहले शिकारी ने कहा--"लेकिन वहाँ तो दो हैं।" और दूसरा बोला--"मैं तो एक को ही देख रहा हूँ और जलाशय में प्रतिबिम्ब भी एक ही का पड़ रहा है "

" नहीं वहाँ दो हैं।" पहला शिकारी बोला—"और शांत जल में प्रतिबिम्ब भी दो जनों का है।

लेकिन दूसरे आदमी ने फिर कहा-- "मैं तो एक ही देख रहा हूँ।" और तब पहले ने कहा—"लेकिन मैं तो स्पष्ट दो देख रहा हूं।"

और आज दिन भी एक का कहना है कि उसके मित्र को एक चीज को दो देखने का नेत्र रोग है, जब कि दूसरा कहता है,—मेरे मित्र को कुछ कम दिखाई देता है।"

